



Notes

- 01_Notes

Index



गाथा / सूत्र	विषय
001)	गुणस्थानों में विभाजन
002)	गुणस्थानों में गमनागमन
003)	गुणस्थानों में कर्म के उदय
004)	गुणस्थानों में कर्म के बन्ध
005)	गुणस्थानों में कर्म की सत्ता
006)	प्रकृति-बन्ध प्ररूपणा
007)	स्तिथि सारिणी
008)	गुणस्थानों का काल और उनमें जीवों की संख्या
009)	प्रकृति-बन्ध प्ररूपणा
010)	संहनन की अपेक्षा गति प्राप्ति
011)	अनुभाग बन्ध के स्वामी
012)	गति-आगति
013)	जीव कहाँ तक जा सकता है
014)	जीव नियमतः कहाँ जाते हैं
020)	आयु
021)	स्वामित्व
022)	कालानुगम
023)	अन्तरानुगम
024)	भंग-विचय
025)	द्रव्य-प्रमाणानुगम
026)	क्षेत्रानुगम
030)	न्याय-वाक्य



+ गुणस्थानों में विभाजन -

गुणस्थानों में विभाजन

अन्वयार्थ : गुणस्थानों में विभाजन

विशेष :

गुणस्थानों के विभिन्न विभाजन													
14 अयोगकेवली	योग		केवल ज्ञानी	सर्वज्ञ	परमगुरु					अनन्त सुखी	परमात्मा		
13 सयोगकेवली									वीतरागी	अतीन्द्रिय सुखी			यथाख्यात चारित्र
12 क्षीणमोह							क्षपक श्रेणी						
11 उपशान्तमोह													
10 सूक्ष्मसाम्पराय	चारित्र मोहनीय	विरत			अप्रमत्त गुरु		उपशम श्रेणी	अप्रमत्त			अंतरात्मा	शुद्धोपयोग	सूक्ष्म-साम्परायिक चारित्र
9 अनिवृत्तिकरण			ज्ञानी				क्षपक श्रेणी						सामायिक छेदोपस्थापना परिहार-विशुद्धि चारित्र
8 अपूर्वकरण				छद्मस्थ		प्रमत्ताप्रमत्त गुरु			मिश्र	मिश्र			
7 अप्रमत्तसंयत													
6 प्रमत्तसंयत													
5 देशविरत		विरताविरत										शुभोपयोग	संयमासंयम
4 अविरत													
3 मिश्र	दर्शन मोहनीय	अविरत	मिश्र					प्रमत्त					
2 सासादन			अज्ञानी						रागी	दुखी	बहिरात्मा	अशुभोपयोग	अधार्मिक
1 मिथ्यात्व													असंयम



+ गुणस्थानों में गमनागमन -

गुणस्थानों में गमनागमन

अन्वयार्थ : गुणस्थानों में गमनागमन

विशेष :

गुणस्थानों में गमनागमन		
कहाँ से	गुणस्थान	कहाँ तक
13→	14 अयोगकेवली	→सिद्ध भगवान
12→	13 सयोगकेवली	→14
10→	12 क्षीणमोह	→13
10→	11 उपशान्तमोह	→10, 4*
9, 11→	10 सूक्ष्मसाम्पराय	→9, 11, 12, 4*
8, 10→	9 अनिवृत्तिकरण	→10, 8, 4*
9, 7→	8 अपूर्वकरण	→9, 7, 4*
8, 6, 5, 4, 1→	7 अप्रमत्तसंयत	→8, 6, 4*
7→	6 प्रमत्तसंयत	→7, 5, 4, 3, 2 ⁺ , 1
6, 4, 1→	5 देशविरत	→7, 4, 3, 2 ⁺ , 1
11*, 10*, 9*, 8*, 7*, 6, 5, 3, 1→	4 अविरत	→7, 5, 3, 2 ⁺ , 1
6, 5, 4, 1→	3 मिश्र	→1, 4
6 ⁺ , 5 ⁺ , 4 ⁺ →	2 सासादन	→1
6, 5, 4, 3, 2→	1 मिथ्यात्व	→3 [!] , 4, 5, 7

गुणस्थानों में गमनागमन		
कहाँ से	गुणस्थान	कहाँ तक
*मरण की अपेक्षा		
*सादि-मिथ्यादृष्टि		
*प्रथमोपशम / द्वितीयोपशम सम्यक्त्व		



+ गुणस्थानों में कर्म के उदय -

गुणस्थानों में कर्म के उदय

अन्वयार्थ : गुणस्थानों में कर्म के उदय

विशेष :

सामान्य से गुणस्थानों में कर्मों के उदय			
	उदय	अनुदय	व्युच्छिति
14 अयोगकेवली	12	110	12वेदनीय (कोइ १), उच्च गोत्र, मनुष्य गति, मनुष्य आयु, पंचेन्द्रिय जाति, त्रस, बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशःकीर्ति, तीर्थकर
13 सयोगकेवली	42+1(तीर्थकर)	80	30वेदनीय(कोइ १), वज्रवृषभनाराच संहनन, ६ संस्थान(छहों), औदारिक शरीर, औदारिक अंगोपांग, तैजस शरीर, कर्माण शरीर, निर्माण, स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छवास, प्रत्येक, शुभ, अशुभ, स्थिर, अस्थिर, प्रशस्त विहायोगति, अप्रशस्त विहायोगति, सुस्वर, दु स्वर
12 क्षीणमोह	57	65	16ज्ञानावरण ५, दर्शनावरण-[अवधि, केवल, निद्रा, प्रचला, चक्षु, अचक्षु], अंतराय ५
11 उपशान्तमोह	59	63	2सहनन - [नाराच, वज्रनाराच]
10 सूक्ष्मसाम्पराय	60	62	1सूक्ष्म लोभ (संज्वलन)
9 अनिवृत्तिकरण	66	56	6 संज्वलन-[क्रोध, मान, माया], वेद - [पुरुष, स्त्री, नपुंसक]
8 अपूर्वकरण	72	50	6हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा
7 अप्रमत्तसंयत	76	46	4सहनन - [असंप्राप्तासृपाटिका, कीलक, अर्द्धनाराच], सम्यक प्रकृति
6 प्रमत्तसंयत	81+2(आहारक शरीर, आहारक अंगोपांग)	41	5निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला, स्थानगृद्धी, आहारक शरीर, आहारक अंगोपांग
5 देशविरत	87	35	8प्रत्याख्यानावरण ४, नीच गोत्र, तिर्यन्व गति, तिर्यन्व आयु, उद्योत
4 अविरत	104+5(अनुपूर्व्य - [देव, मनुष्य, तिर्यन्व, नरक], सम्यक-प्रकृति)	18	17अप्रत्याख्यानावरण ४, गति-[नरक, देव], आयु-[नरक, देव], आनुपूर्व्य - [नरक, मनुष्य, तिर्यच, देव], वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक अंगोपांग, आनादेय, अयशःकीर्ति, दुर्भग
3 मिश्र	100(सम्यक-मिथ्यात्व)	22अनुपूर्व्य-[देव, मनुष्य, तिर्यन्व]	1सम्यकमिथ्यात्व
2 सासादन	111	11नरक अनुपूर्व्य	9अनंतानुबंधी ४, स्थावर, जाति ४ [१,२,३,४ इन्द्रिय]
1 मिथ्यात्व	117	5सम्यकमिथ्यात्व, सम्यक प्रकृति, आहारक द्विक, तीर्थकर)	5मिथ्यात्व, सूक्ष्म, आतप, अपर्याप्त, साधारण

*उदय योग्य कुल प्रकृतियाँ = १२२



+ गुणस्थानों में कर्म के बन्ध -

गुणस्थानों में कर्म के बन्ध

अन्वयार्थ : गुणस्थानों में कर्म के बन्ध

विशेष :

सामान्य से गुणस्थानों में बंध* / अबंध / व्युच्छिति			
	बंध	अबंध	व्युच्छिति
14 अयोगकेवली	0	120	0
13 सयोगकेवली	1	119	1(साता-वेदनीय)
12 क्षीणमोह	1	119	0
11 उपशान्तमोह	1	119	0
10 सूक्ष्मसाम्पराय	17	103	16(ज्ञानावरण ५, दर्शनावरण-[चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल], अंतराय ५, यशःकीर्ति, उच्च गोत्र)
9 अनिवृत्तिकरण	22	98	5(संज्वलन ४, पुरुष-वेद)
8 अपूर्वकरण	58	62	36(निद्रा, प्रचला, तीर्थकर, निर्माण, प्रशस्त विहायोगति, पंचेन्द्रिय जाति, शरीर-[तेजस, कार्माण, आहारक, वैक्रियिक], अंगोपांग-[आहारक, वैक्रियिक], समचतुस्र संस्थान, देव [गति, गत्यानुपूर्व], स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, हास्य, रति, जुगुप्सा, भय, अगुरुलघुत्व, उपघात, परघात, उच्छवास, त्रस, बादर, पर्याप्त, स्थिर, प्रत्येक, शुभ, सुभग, सुःस्वर, आदेय)
7 अप्रमत्तसंयत	59(+आहारक द्विक)	61	1(देव आयु)
6 प्रमत्तसंयत	63	57	6(असाता-वेदनीय, अरति, शोक, अशुभ, अस्थिर, अयशःकीर्ति)
5 देशविरत	67	53	4(प्रत्याख्यानावरण ४)
4 अविरत	77(+तीर्थकर, देवायु, मनुष्यआयु)	43	10(अप्रत्याख्यानावरण ४, मनुष्य-[आयु, गति, आनुपूर्व], औदारिक शरीर, औदारिक अंगोपांग, वज्रवृषभनाराच संहनन)
3 मिश्र	74	46(आयु-देव, मनुष्य)	0
2 सासादन	101	19	25(अनंतानुबंधी ४, स्त्री-वेद, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला, स्त्यानगृद्धि, संहनन-[वज्र-नाराच, नाराच, अर्द्ध नाराच, कीलक], संस्थान-[स्वाति, न्याग्रोधपरिमण्डल, कुब्जक, वामन], तिर्यन्च-[आयु, अनुपूर्व, गति], नीच गोत्र, अप्रशस्त-विहायोगति, उद्योत, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय)
1 मिथ्यात्व	117	3(आहारक द्विक, तीर्थकर)	16(मिथ्यात्व, हुण्डकसंस्थान, नपुंसकवेद, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, इन्द्रिय [दो, तीन, चार], नरक [गति, गत्यानुपूर्वी, आयु])
*बंध योग्य प्रकृतियों = 120			



+ गुणस्थानों में कर्म की सत्ता -

गुणस्थानों में कर्म की सत्ता

अन्वयार्थ : गुणस्थानों में कर्म की सत्ता

विशेष :

कर्म-सत्ता सारिणी			
गुणस्थान	सत्ता [क्षायोपशमिक और औपशमिक]	कुल	कुल
			क्षायिक- सम्यकदृष्टि सत्ता [क्षपक श्रेणी]

कर्म-सत्ता सारिणी				
गुणस्थान	सत्ता [क्षायोपशमिक और औपशमिक]	कुल	क्षायिक- सम्यकदृष्टि सत्ता [क्षपक श्रेणी]	कुल
1 मिथ्यात्व		148		
2 सासादन	(-3) आहारक शरीर, आहारक अंगोपांग, तीर्थकर	145		
3 मिश्र	(+2) आहारक शरीर, आहारक अंगोपांग	147		
4 अविरत	(+1) तीर्थकर	148	(-7) दर्शन मोहनीय [मिथ्यात्व, सम्यक-मिथ्यात्व, सम्यक-प्रकृति], अनंतानुबंधी ४	141
5 देशविरत	(-1) नरक आयु	147	(-1) नरक आयु	140
6 प्रमत्तसंयत	(-1) तिर्यन्च आयु	146	(-1) तिर्यन्च आयु	139
7 अप्रमत्तसंयत				
8 अपूर्वकरण	(-4) अनंतानुबंधी ४	142	(-1) देव आयु	138
9 अनिवृत्तिकरण				
10 सूक्ष्मसाम्पराय			(-36) अप्रत्याख्यानावरण ४, प्रत्याख्यानावरण ४, संज्वलन ४, नोकषाय ९, जाति ४ [१ से ४ इंद्रिया], सूक्ष्म, स्थावर, साधारण, आतप, उद्योत, गति [नरक, तिर्यन्च], गत्यानुपूर्व [नरक, तिर्यन्च], दर्शनावर्णी [निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला, स्थानगृद्धि]	102
11 उपशान्तमोह				
12 क्षीणमोह			(-1) सूक्ष्म लोभ	101
13 सयोगकेवली			(-16) ज्ञानावरण ५, दर्शनावरण-[अवधि, केवल, निद्रा, प्रचला, चक्षु, अचक्षु], अंतराय ५	85
14 अयोगकेवली			(-72) वेदनीय (कोइ 1), नीच गोत्र, देव गति, देव अनुपूर्व, 3 अंगोपांग (औदारिक, आहारक, वैक्रियिक), 5 शरीर(औदारिक, आहारक, वैक्रियिक, तैजस, कामांग), निर्माण, 5 बंधन, 5 संघात, 6 संहनन(वज्रवृषभनाराच, वज्रनाराच, नाराच, कीलक, अर्द्धनाराच, असंप्राप्तासृपाटिका), 6 संस्थान(समचतुस्र, स्वाति, हुण्डक, न्यग्रोधपरिमण्डल, कुब्जक, वामन), 20 (स्पर्श 8, रस 5, गंध 2, वर्ण 5), अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छवास, प्रत्येक, शुभ, अशुभ, स्थिर, अस्थिर, 2 विहायोगति (प्रशस्त, अप्रशस्त), सुस्वर, दुस्वर, अपर्याप्त, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति (-13) वेदनीय (कोइ 1), उच्च गोत्र, मनुष्य गति, मनुष्य आयु, मनुष्य अनुपूर्व, पंचेन्द्रिय जाति, त्रस, बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशःकीर्ति, तीर्थकर	0
लाल रंग उस गुणस्थान में कर्म की व्युत्पत्ति दर्शाता है				
क्षायिक- सम्यकदृष्टि के उपशम-श्रेणी में सत्ता में आगे कोई परिवर्तन नहीं				



+ प्रकृति-बन्ध प्ररूपणा -

प्रकृति-बन्ध प्ररूपणा

अन्वयार्थ : प्रकृति-बन्ध प्ररूपणा

विशेष :

प्रकृतिबन्ध की अपेक्षा स्वामित्व प्ररूपणा

मूल प्रकृति	उत्तर प्रकृति	स्वामित्व व गुणस्थान	
		उत्कृष्ट	जघन्य
ज्ञानावरण	पाँचों	१०	सू. ल./च
दर्शनावरण	चक्षु, अचक्षु अवधि व केवलदर्शन	१०	सू. ल./च

प्रकृतिबन्ध की अपेक्षा स्वामित्व प्ररूपणा

मूल प्रकृति	उत्तर प्रकृति		स्वामित्व व गुणस्थान	
			उत्कृष्ट	जघन्य
	निद्रा, प्रचला		१०	सू. ल./च
	निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला		१	सू. ल./च
वेदनीय	साता		१०	सू. ल./च
	असाता		१-९	सू. ल./च
मोहनीय	मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चतुष्क		१	सू. ल./च
	अप्रत्याख्यानारवण चतुष्क		४	सू. ल./च
	प्रत्याख्यानारवण चतुष्क		५	सू. ल./च
	संज्वलन चतुष्क		९	सू. ल./च
	हास्य,रति, अरति, शोक,भय, जुगुप्सा		४-९	सू. ल./च
	स्त्री वेद, नपुंसक वेद		१	सू. ल./च
	पुरुष वेद		१०	सू. ल./च
आयु	नरक		१	असंज्ञी
	तिर्यच		१	सू. ल./च
	मनुष्य, देव		१-९	
नाम	गति	नरक	१	असंज्ञी
		तिर्यच, मनुष्य	१	सू. ल./च
		देव	१-९	अविरत सम्यक्त्वी
	जाति	एकेन्द्रियादि पाँचों	१	सू. ल./च
	शरीर	औदारिक, तैजस, कार्मण	१	सू. ल./च
		वैक्रियक	१-९	अविरत सम्यक्त्वी
		आहारक	७	अप्रमत्त
	अंगोपांग	औदारिक	१	
		वैक्रियक	१-९	अविरति
		आहारक	७	अप्रमत्त
	निर्माण, बन्धन, संघात		१	सू. ल./च
	संस्थान	समचतुरस्र	१-९	सू. ल./च
		शेष पाँचों	१	सू. ल./च
	संहनन	वज्र वृषभ नाराच	१-९	सू. ल./च
		शेष पाँचों	१	सू. ल./च
	स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण		१	सू. ल./च
	आनुपूर्वी	नरक	१	असंज्ञी
		तिर्यच व मनुष्य	१	सू. ल./च
		देव	१-९	अविरत सम्यक्त्वी
	अगुरुलघु, उपघात, परघात		१	सू. ल./च
	आतप, उद्योत, उच्छवास		१	सू. ल./च
	विहायोगति	प्रशस्त	१-९	सू. ल./च
		अप्रशस्त	१	सू. ल./च
	प्रत्येक, साधारण, त्रस, स्थावर, दुर्भग		१	सू. ल./च
	सुभग, आदेय		१-९	सू. ल./च
	सुस्वर, दुःस्वर, शुभ, अशुभ		१	सू. ल./च
	सूक्ष्म,बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त		१	सू. ल./च
	स्थिर, अस्थिर, अनादेय, अयशःकीर्ति		१	सू. ल./च
	यशःकीर्ति		१०	सू. ल./च
	तीर्थकर			
गोत्र	उच्च		१०	सू. ल./च
	नीच		१	सू. ल./च
अन्तराय	पाँचों		१०	सू. ल./च

सू. ल./च = चरम भवस्थ तथा तीन विग्रह में से प्रथम विग्रह में स्थित सूक्ष्म निगोद लब्धपर्याप्त जीव



+ स्थिति सारिणी - स्थिति सारिणी

अन्वयार्थ : स्थिति सारिणी

विशेष :

इंद्रिय मार्गणा की अपेक्षा कर्म प्रकृतियों के स्थिति की सारणी												
	एकेंद्रिय		द्विंद्रिय		त्रिंद्रिय		चतुर्द्रिय		असंज्ञी पंचेंद्रिय		संज्ञी पंचेंद्रिय	
	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य
	सागर	प/असं	सा	प/असं	सा	प/असं	सा	प/असं	सा	प/असं	को.को.सागर	अंतरमुहूर्त
ज्ञानावरणी												
दर्शनावरणी	3/7	3/7	75/7	75/7	150/7	150/7	300/7	300/7	3000/7	3000/7	30	1
अंतराय												
वेदनीय												12
दर्शन मोहनीय	1	1	25	25	50	50	100	100	1000	1000	70	1
कषाय	4/7	4/7	100/7	100/7	200/7	200/7	400/7	400/7	4000/7	4000/7	40	1
नोकषाय	2/7	2/7	50/7	50/7	100/7	100/7	200/7	200/7	2000/7	2000/7	20	1
आयु	१ को.पू.	अंतर्मुहूर्त	१ को.पू.	अंतर्मुहूर्त	१ को.पू.	अंतर्मुहूर्त	१ को.पू.	अंतर्मुहूर्त	>पल्य/८	अंतर्मुहूर्त	३३ सा.	अंतर्मुहूर्त
नाम												
गोत्र	2/7	2/7	50/7	50/7	100/7	100/7	200/7	200/7	2000/7	2000/7	20	8
प/असं = पल्य का असंख्यात भाग वर्ष												
को. को. सागर = कोडा-कोडी सागर = करोड़ x करोड सागर = 10 ¹⁴ सागर												



+ गुणस्थानों का काल और उनमें जीवों की संख्या -

गुणस्थानों का काल और उनमें जीवों की संख्या

अन्वयार्थ : गुणस्थानों का काल और उनमें जीवों की संख्या

विशेष :

	काल		जीवों की संख्या(उत्कृष्ट)		मुक्त होने के लिए अनिवार्य गुणस्थान	जीव सदाकाल पाए जाते हैं
	जघन्य	उत्कृष्ट	मनुष्यों की	चारों गतियां		
1 मिथ्यात्व	अन्तर्मुहूर्त	अनादि अनन्तअनादि सान्तसादि सान्त - कुछ कम अर्ध पुद्गल परावर्तन	पर्याप्त - २९ अंक प्रमाणअपर्याप्त - असंख्यात	अनंतानन्त	✓	✓
2 सासादन	१ समय	६ आवली	५२ करोड़	असंख्यात		
3 मिश्र	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त (ज. से संख्यात गुणा बड़ा)	१०४ करोड़	असंख्यात		
4 अविरत	अन्तर्मुहूर्त	1 समय कम 33 सागर + 9 अन्तर्मुहूर्त कम 1 पूर्व कोटि	७०० करोड़	असंख्यात		✓
5 देशविरत	अन्तर्मुहूर्त	3 अन्तर्मुहूर्त कम 1 पूर्वकोटि	१३ करोड़	असंख्यात		✓

	काल		जीवों की संख्या(उत्कृष्ट)		मुक्त होने के लिए अनिवार्य गुणस्थान	जीव सदाकाल पाए जाते हैं
	जघन्य	उत्कृष्ट	मनुष्यों की	चारों गतियां		
6 प्रमत्तसंयत	१ समय - मरण अपेक्षा अंतर्मुहूर्त - सामान्य से	अन्तर्मुहूर्त	५,९३,९८,२०६	✓	✓	
7 अप्रमत्तसंयत		अन्तर्मुहूर्त (६ से आधा)	२,९६,९९,१०३	✓	✓	
8 अपूर्वकरण		यथायोग्य अन्तर्मुहूर्त	२९९+५९८=८९७	✓		
9 अनिवृत्तिकरण				✓		
10 सूक्ष्मसाम्पराय				✓		
11 उपशान्तमोह		अन्तर्मुहूर्त (२ क्षुद्र भव ~ १/१२ सेकण्ड)	२९९			
12 क्षीणमोह		अन्तर्मुहूर्त (४ क्षुद्र भव ~ १/६ सेकण्ड)	५९८	✓		
13 सयोगकेवली	अन्तर्मुहूर्त	आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्त कम १ कोटि पूर्व	८,९८,५०२	✓	✓	
14 अयोगकेवली	अन्तर्मुहूर्त (५ ह्रस्व अक्षरों अ,इ,उ,ऋ,लृ का उच्चारण काल)		५९८	✓		



+ प्रकृति-बन्ध प्ररूपणा -

प्रकृति-बन्ध प्ररूपणा

अन्वयार्थ : प्रकृति-बन्ध प्ररूपणा

विशेष :

प्रकृतिबन्ध की अपेक्षा स्वामित्व प्ररूपणा				
मूल प्रकृति	उत्तर प्रकृति	स्वामित्व व गुणस्थान		
		उत्कृष्ट	जघन्य	
ज्ञानावरण	पाँचों	१०	सू. ल./च	
दर्शनावरण	चक्षु, अचक्षु अवधि व केवलदर्शन	१०	सू. ल./च	
	निद्रा, प्रचला	१०	सू. ल./च	
	निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला	१	सू. ल./च	
वेदनीय	साता	१०	सू. ल./च	
	असाता	१-९	सू. ल./च	
मोहनीय	मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चतुष्क	१	सू. ल./च	
	अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क	४	सू. ल./च	
	प्रत्याख्यानावरण चतुष्क	५	सू. ल./च	
	संज्वलन चतुष्क	९	सू. ल./च	
	हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा	४-९	सू. ल./च	
	स्त्री वेद, नपुंसक वेद	१	सू. ल./च	
	पुरुष वेद	१०	सू. ल./च	
आयु	नरक	१	असंज्ञी	
	तिर्य्यच	१	सू. ल./च	
	मनुष्य, देव	१-९		
नाम	गति	नरक	१	असंज्ञी
		तिर्य्यच, मनुष्य	१	सू. ल./च
		देव	१-९	अविरत सम्यक्त्वी

मूल प्रकृति	प्रकृतिबन्ध की अपेक्षा स्वामित्व प्ररूपणा		
	उत्तर प्रकृति		स्वामित्व व गुणस्थान
			उत्कृष्ट जघन्य
जाति	एकेन्द्रियादि पाँचों	१	सू.ल./च
शरीर	औदारिक, तैजस, कार्मण	१	सू.ल./च
	वैक्रियक	१-९	अविरत सम्यक्त्वी
	आहारक	७	अप्रमत्त
अंगोपांग	औदारिक	१	
	वैक्रियक	१-९	अविरति
	आहारक	७	अप्रमत्त
निर्माण, बन्धन, संघात		१	सू.ल./च
संस्थान	समचतुरस्र	१-९	सू.ल./च
	शेष पाँचों	१	सू.ल./च
संहनन	वज्र वृषभ नाराच	१-९	सू.ल./च
	शेष पाँचों	१	सू.ल./च
स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण		१	सू.ल./च
आनुपूर्वी	नरक	१	असंज्ञी
	तिर्यच व मनुष्य	१	सू.ल./च
	देव	१-९	अविरत सम्यक्त्वी
अगुरुलघु, उपघात, परघात		१	सू.ल./च
आतप, उद्योत, उच्छवास		१	सू.ल./च
विहायोगति	प्रशस्त	१-९	सू.ल./च
	अप्रशस्त	१	सू.ल./च
प्रत्येक, साधारण, त्रस, स्थावर, दुर्भग		१	सू.ल./च
सुभग, आदेय		१-९	सू.ल./च
सुस्वर, दुःस्वर, शुभ, अशुभ		१	सू.ल./च
सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त		१	सू.ल./च
स्थिर, अस्थिर, अनादेय, अयशःकीर्ति		१	सू.ल./च
यशःकीर्ति		१०	सू.ल./च
तीर्थकर			
गोत्र	उच्च	१०	सू.ल./च
	नीच	१	सू.ल./च
अन्तराय	पाँचों	१०	सू.ल./च

सू.ल./च = चरम भवस्थ तथा तीन विग्रह में से प्रथम विग्रह में स्थित सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्त जीव



+ संहनन की अपेक्षा गति प्राप्ति -

संहनन की अपेक्षा गति प्राप्ति

अन्वयार्थ : संहनन की अपेक्षा गति प्राप्ति

विशेष :

किस संहनन से मरकर किस गति तक उत्पन्न होना सम्भव है

संहनन	प्राप्तव्य स्वर्ग
१	पंच अनुत्तर तक
१,२	नव अनुदिश तक

१-३	नव त्रैवेयक तक
१-४	अच्युत तक
१-५	सहस्रार तक
१-६	सौधर्म से कापिष्ठ तक
1=वज्ररुषभनाराच 2=वज्रनाराच 3=नाराच;4=अर्धनाराच;5=कीलित;6=सूपाटिका	
गो.क./मू./२९-३१/२४ और गो.क./जी.प्र./५४९/७२५/१४	



+ अनुभाग बन्ध के स्वामी -

अनुभाग बन्ध के स्वामी

अन्वयार्थ : अनुभाग बन्ध सारणी

विशेष :

अनुभाग बंध के स्वामी		
	उत्कृष्ट अनुभाग के स्वामी	जघन्य अनुभाग के स्वामी
ज्ञानावरणीय ५	ती. मिथ्या.	सूक्ष्मसाम्पराय का चरम समय
दर्शनावरणीय ४	ती. मिथ्या.	सूक्ष्मसाम्पराय का चरम समय
निद्रा, प्रचला	ती. मिथ्या.	अपूर्वकरण में बन्धव्युच्छित्ति से पहले
निद्रा निद्रा, प्रचला प्रचला	ती. मिथ्या.	सातिशय मिथ्यादृष्टि/चरम
स्त्यानगृद्धि	ती. मिथ्या.	सातिशय मिथ्यादृष्टि/चरम
अन्तराय ५	ती. मिथ्या.	सूक्ष्मसाम्पराय का चरम समय
मिथ्यात्व	ती. मिथ्या.	सातिशय मिथ्यादृष्टि/चरम
अनन्तानुबन्धी 4	ती. मिथ्या.	सातिशय मिथ्यादृष्टि/चरम
अप्रत्याख्यान 4	ती. मिथ्या.	प्रमत्तसंयत सन्मुख अविरतसम्यग्दृष्टि
प्रत्याख्यान 4	ती. मिथ्या.	प्रमत्तसंयत सन्मुख देशसंयत
संज्वलन 4	ती. मिथ्या.	अनिवृत्तिकरण में बन्धव्युच्छित्ति से पहले
हास्य, रति	ती. मिथ्या.	अपूर्वकरण में बन्धव्युच्छित्ति से पहले
अरति, शोक	ती. मिथ्या.	अप्रमत्तसंयत सन्मुख प्रमत्तसंयत
भय, जुगुप्सा	ती. मिथ्या.	अपूर्वकरण में बन्धव्युच्छित्ति से पहले
स्त्री, नपुंसक वेद	ती. मिथ्या.	ती. मिथ्या.
पुरुष वेद	ती. मिथ्या.	अनिवृत्तिकरण में बन्धव्युच्छित्ति से पहले
साता	क्षपकश्रेणी	मध्य मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टि
असाता	ती. मिथ्या.	मध्य मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टि
नरकायु	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच
तिर्यचायु	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच
मनुष्यायु	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच
देवायु	अप्रमत्तसंयत	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच
उच्च गोत्र	क्षपक श्रेणी	मध्य. मिथ्यादृष्टि
नीच गोत्र	चतु. तीव्र मिथ्यादृष्टि	सप्तम पृथ्वी नारकी मिथ्यादृष्टि
तीर्थकर	क्षपक श्रेणी	नरक सन्मुख मिथ्यादृष्टि
नरक द्वि.	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच
तिर्यक् द्वि.	मिथ्यादृष्टि देव नारकी	सप्तम पू. नारकी
मनुष्य द्वि.	सम्यग्दृष्टि देव नारकी	मध्य मिथ्यादृष्टि
देव द्वि.	क्षपकश्रेणी	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच
एकेन्द्रिय जाति	मिथ्यादृष्टिदेव मध्य मिथ्यादृष्टि	देव मनुष्य तिर्यच

	अनुभाग बंध के स्वामी	
	उत्कृष्ट अनुभाग के स्वामी	जघन्य अनुभाग के स्वामी
२-४ इन्द्रिय जाति	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच
पंचेन्द्रिय जाति	क्षपकश्रेणी	ती. मिथ्या.
औदारिक द्वि.	सम्यग्दृष्टि देव नारकी	मिथ्यादृष्टि देव नारकी
वैक्रियक द्वि.	क्षपकश्रेणी	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच
आहारक द्वि.	क्षपकश्रेणी	प्रमत्तसंयत सन्मुख अप्रमत्तसंयत
तैजस शरीर	क्षपकश्रेणी	ती. मिथ्या.
कार्मण शरीर	क्षपकश्रेणी	ती. मिथ्या.
निर्माण	क्षपकश्रेणी	ती. मिथ्या.
प्रशस्त वर्णादि ४	क्षपकश्रेणी	ती. मिथ्या.
अप्रशस्त वर्णादि ४	ती. मिथ्या.	अपूर्वकरण में बन्धव्युच्छित्ति से पहले मध्य मिथ्यादृष्टि
समचतुरस्र संस्थान	क्षपकश्रेणी	मध्य मिथ्यादृष्टि
शेष पाँच संस्थान	ती. मिथ्या.	मध्य मिथ्यादृष्टि
वज्र ऋषभ नाराच	सम्यग्दृष्टि देव	मध्य मिथ्यादृष्टि
वज्र नाराच आदि ४	ती. मिथ्या.	मध्य मिथ्यादृष्टि
असंप्राप्त सृपाटिका	मिथ्यादृष्टि देव नारकी	मध्य मिथ्यादृष्टि
अगुरुलघु	क्षपकश्रेणी	ती. मिथ्या.
उपघात	ती. मिथ्या.	अपूर्वकरण में बन्धव्युच्छित्ति से पहले
परघात	क्षपकश्रेणी	ती. मिथ्या.
आतप	मिथ्यादृष्टि देव	तीव्र कषाय युक्त मिथ्यादृष्टि भवनत्रिक से ईशान.
उद्योत	मिथ्यादृष्टि देव	मिथ्यादृष्टिदेव नारकी
उच्छ्वास	सूक्ष्मसाम्पराय का चरम समय	ती. मिथ्या.
प्रशस्त विहायोगति	क्षपकश्रेणी	मध्य मिथ्यादृष्टि
अप्रशस्त विहायोगति	ती. मिथ्या.	मध्य मिथ्यादृष्टि
प्रत्येक	क्षपकश्रेणी	ती. मिथ्या.
साधारण	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच	मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यच
त्रस	क्षपकश्रेणी	ती. मिथ्या.
ती. मिथ्या. = तीव्र कषाययुक्त चतुर्गति के मिथ्यादृष्टि जीव		



+ गति-आगति - गति-आगति

अन्वयार्थ : गति-आगति

विशेष :

जीवों में गति																			
देव								मनुष्य		तिर्यच				नरक					
भवनवासी		व्यंतर	ज्योतिष	१-२ स्वर्ग	३-१२ स्वर्ग	१३-१६ स्वर्ग	नव त्रैवेयक	सर्वार्थसिद्धि	भोगभूमि	कर्मभूमि	भोगभूमि	एकेंद्रिय	विकलत्रय	पंचेन्द्रिय	पहला	२-७			
देव	भवनत्रिक, देवियाँ, १-२ स्वर्ग		नहीं							हाँ	नहीं	हाँ+	नहीं	हाँ	नहीं				
	३-१२ स्वर्ग										नहीं								
	१३वें स्वर्ग से सर्वार्थ-सिद्धि										नहीं								

जीवों में गति

		जीवों में गति																
		देव							मनुष्य		तिर्यच					नरक		
		भवनवासी	व्यंतर	ज्योतिष	१-२ स्वर्ग	३-१२ स्वर्ग	१३-१६ स्वर्ग	नव ग्रैवेयक	सर्वार्थसिद्धि	भोगभूमि	कर्मभूमि	भोगभूमि	एकेंद्रिय	विकलत्रय	पंचेन्द्रिय	पहला	२-७	
		भवनवासी	व्यंतर	ज्योतिष	१-२ स्वर्ग	३-१२ स्वर्ग	१३-१६ स्वर्ग	नव ग्रैवेयक	सर्वार्थसिद्धि	भोगभूमि	कर्मभूमि	भोगभूमि	एकेंद्रिय	विकलत्रय	पंचेन्द्रिय	पहला	२-७	
मनुष्य	मि. पर्याप्तक कर्मभूमि	हाँ						हाँ^	नहीं	हाँ								
	मि. अपर्याप्तक	नहीं									हाँ	नहीं	हाँ			नहीं		
	मि. भोगभूमि	नहीं		हाँ	नहीं													
	सा. कर्मभूमि	हाँ						नहीं	हाँ			नहीं	हाँ	नहीं				
	अ.स. / संयातासंयत कर्मभूमि	नहीं				हाँ	हाँ^	नहीं										
	संयत		हाँ				नहीं											
	पुलाक मुनि		हाँ	नहीं														
	बकुश, प्रतिसेवना मुनि		हाँ	नहीं														
	कषायकुशील, निर्ग्रन्थ मुनि		हाँ				नहीं											
अ.स. भोगभूमि	हाँ		नहीं															
	भवनवासी		व्यंतर	ज्योतिष	१-२ स्वर्ग	३-१२ स्वर्ग	१३-१६ स्वर्ग	नव ग्रैवेयक	सर्वार्थसिद्धि	भोगभूमि	कर्मभूमि	भोगभूमि	एकेंद्रिय	विकलत्रय	पंचेन्द्रिय	पहला	२-७	
तिर्यच	मि. संज्ञी पर्याप्तक पंचेन्द्रिय कर्मभूमि	हाँ				नहीं			हाँ									
	असंज्ञी पर्याप्तक पंचेन्द्रिय कर्मभूमि	हाँ	नहीं						हाँ	नहीं	हाँ			नहीं				
	पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, विकलेन्द्रिय, जल, पृथ्वी, वनस्पति	नहीं						हाँ	नहीं	हाँ			नहीं					
	अग्नि / वायुकायिक	नहीं										हाँ			नहीं			
	मि. भोगभूमि	हाँ	नहीं															
	नित्य / इतर निगोद	नहीं								हाँ	नहीं	हाँ			नहीं			
	सा. कर्मभूमि	हाँ				नहीं			हाँ			नहीं	हाँ	नहीं				
	अ.स. / संयातासंयत कर्मभूमि	नहीं	हाँ	हाँ*	नहीं													
	अ.स. भोगभूमि		हाँ	नहीं														
	भवनवासी	व्यंतर	ज्योतिष	१-२ स्वर्ग	३-१२ स्वर्ग	१३-१६ स्वर्ग	नव ग्रैवेयक	सर्वार्थसिद्धि	भोगभूमि	कर्मभूमि	भोगभूमि	एकेंद्रिय	विकलत्रय	पंचेन्द्रिय	पहला	२-७		
नरक	पहला नरक	नहीं								हाँ	नहीं			हाँ	नहीं			
	२-७ नरक	नहीं												हाँ			नहीं	
		मि. = मिथ्यादृष्टि		सा. = सासादन		अ.स. = असंयत सम्यग्दृष्टि		* = २ मत हैं		^ = १६ स्वर्ग से ऊपर बाह्य में निर्ग्रन्थ वेष				+ = देव अग्नि और वायु में पैदा नहीं होते				

मि. = मिथ्यादृष्टि

सा. = सासादन

अ.स. = असंयत सम्यग्दृष्टि

* = २ मत हैं

^ = १६ स्वर्ग से ऊपर बाह्य में निर्ग्रन्थ वेष्ट

+ = देव अग्नि और वायु में पैदा नहीं होते



+ जीव कहाँ तक जा सकता है -

जीव कहाँ तक जा सकता है

अन्वयार्थ : जीव कहाँ तक जा सकता है

विशेष :

कहाँ से	कहाँ तक जा सकते हैं
असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यच	पहला नरक
सरी सर्प (पेट के बल चलने वाले)	दूसरा नरक
गिद्ध पक्षी	तीसरा नरक
सर्प, अजगर आदि	चौथा नरक
सिंह, क्रूर तिर्यच	पांचवां नरक
स्त्री	छठा नरक
मनुष्य, मच्छ	सातवां नरक
वैमानिक देव, १-३ नरक	तीर्थकर
चौथा नरक	मोक्ष, तीर्थकर नहीं
पांचवां नरक	महाव्रती, मोक्ष नहीं
छठा नरक	देशव्रत, महाव्रत नहीं
सभी देव, देवियाँ	मोक्ष
१ स्वर्ग से नौ ग्रैवेयिक	नारायण, प्रतिनारायण
परिव्राजक	पांचवें स्वर्ग
आजीविक सम्प्रदाय के साधु	१२वें स्वर्ग
श्रावक	१६वें स्वर्ग
निर्ग्रन्थ द्रव्य-लिंगी	नौ ग्रैवेयिक
पंचम काल का मनुष्य	१६वें स्वर्ग तक



+ जीव नियमतः कहाँ जाते हैं -

जीव नियमतः कहाँ जाते हैं

अन्वयार्थ : जीव नियमतः कहाँ जाते हैं

विशेष :

कहाँ से	कहाँ जाते हैं
चक्रवर्ती	मोक्ष, स्वर्ग, नरक
बलभद्र	मोक्ष, स्वर्ग
नारायण, प्रतिनारायण	नरक
सातवां नरक	क्रूर पंचेन्द्रिय संज्ञी गर्भज तिर्यच
कुलकर	वैमानिक स्वर्ग
कामदेव	मोक्ष
तीर्थकर के पिता	स्वर्ग, मोक्ष
तीर्थकर की माता	स्वर्ग
नारद, रूद्र	नरक



+ आयु -

आयु

अन्वयार्थ : जीवों की उत्कृष्ट / जघन्य आयु

विशेष :

देवों में आयु आदि जानकारी														
देव										देवियों की आयु				
	ज.आयु	उ.आयु	स्वाच्छोश्वास	आहार	अवगाहना	लेश्या	प्रविचार	अल्प-बहुत्व	संख्या	ज.आयु	उ.आयु			
अच्युत	२० सागर	२२ सागर	२२ पक्ष	२२,००० वर्ष	३ हाथ	शुक्ल	मन	ऊपर से संख्यात गुणा	पल्य के असंख्यातवें भाग	१ पल्य	५५ पल्य			
आरण														४८ पल्य
प्राणत														४१ पल्य
आनत	१८ सागर	२० सागर	२० पक्ष	२०,००० वर्ष	३ १/२ हाथ	पद्म,शुक्ल	शब्द	ऊपर से संख्यात गुणा	पल्य के असंख्यातवें भाग		३४ पल्य			
सहस्रार	१६ सागर	१८ सागर	१८ पक्ष	१८,००० वर्ष				ऊपर से असंख्यात गुणा	जगतश्रेणी / $2^3\sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$		२७ पल्य			
शतार											२५ पल्य			
महाशुक्र	१४ सागर	१६ सागर	१६ पक्ष	१६,००० वर्ष	४ हाथ	पद्म	रूप	ऊपर से असंख्यात गुणा	जगतश्रेणी / $2^5\sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$		२३ पल्य			
शुक्र											२१ पल्य			
कापिष्ठ	१० सागर	१४ सागर	१४ पक्ष	१४,००० वर्ष				५ हाथ	पीत,पद्म		स्पर्श	ऊपर से असंख्यात गुणा	जगतश्रेणी / $2^7\sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$	१९ पल्य
लान्तव														१७ पल्य
ब्रह्मोत्तर	७ सागर	१० सागर	१० पक्ष	१०,००० वर्ष	ऊपर से असंख्यात गुणा	जगतश्रेणी / $2^9\sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$	१५ पल्य							
ब्रह्म					६ हाथ	पीत	काय	ऊपर से असंख्यात गुणा	जगतश्रेणी / $2^{11}\sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$		१३ पल्य			
माहेन्द्र	२ सागर	७ सागर	७ पक्ष	७००० वर्ष							ऊपर से असंख्यात गुणा	जगतश्रेणी x $2^3\sqrt{(\text{घनांगुल})}$	९ पल्य	
सानत्कुमार													११ पल्य	
ईशान	१ पल्य	२ सागर	२ पक्ष	२००० वर्ष	७ हाथ						७ पल्य			
सौधर्म											५ पल्य			
अल्प-बहुत्व आधार: श्री कार्तिकेयअनुप्रेक्षा, गाथा: 158, श्री गोम्मटसार, गाथा : 161,162														
देवियों की आयु पाँच से लेकर दो-दो मिलाते हुए सत्ताईस पल्य तक करें । पुनः उससे आगे सात-सात बढ़ाते हुए आरण-अच्युत पर्यन्त करना चाहिए ॥मू.चा.११२२॥														

नरकों में आयु आदि जानकारी									
नाम	भूमि का नाम	आयु		अल्प-बहुत्व	संख्या	लेश्या	पुनः पुनर्भव धारण की सीमा		
		जघन्य	उत्कृष्ट				कितनी बार	उत्कृष्ट अन्तर	
पहला	धम्मा	रत्नप्रभा	दस हजार वर्ष	एक सागर	नीचे से असं. गुणा	(जगतश्रेणी x $2^2\sqrt{(\text{घनांगुल})}$) - शेष नारकी	कापोत	८ बार	२४ मुहूर्त
दूसरा	वंशा	शर्कराप्रभा	एक सागर	तीन सागर	नीचे से असं. गुणा	जगतश्रेणी / $2^{12}\sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$	मध्यम कापोत	७ बार	७ दिन
तीसरा	मेघा	बालुकाप्रभा	तीन सागर	सात सागर	नीचे से असं. गुणा	जगतश्रेणी / $2^{10}\sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$	उत्कृष्ट कापोत, जघन्य नील	६ बार	१ पक्ष

नरकों में आयु आदि जानकारी									
नाम	भूमि का नाम	आयु		अल्प-बहुत्व	संख्या	लेश्या	पुनः पुनर्भव धारण की सीमा		
		जघन्य	उत्कृष्ट				कितनी बार	उत्कृष्ट अन्तर	
चौथा	अंजना	पंकप्रभा	सात सागर	दस सागर	नीचे से असं. गुणा	जगतश्रेणी / $2^8 \sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$	मध्यम नील	5 बार	1 माह
पांचवां	अरिष्ठा	धूम्रप्रभा	दस सागर	सत्रह सागर	नीचे से असं. गुणा	जगतश्रेणी / $2^6 \sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$	उत्कृष्ट नील, जघन्य कृष्ण	4 बार	2 माह
छठा	मघवा	तमप्रभा	सत्रह सागर	बाईस सागर	नीचे से असं. गुणा	जगतश्रेणी / $2^3 \sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$	मध्यम कृष्ण	3 बार	4 माह
सातवां	माधवी	महातमप्रभा	बाईस सागर	तैंतीस सागर	असंख्यात	जगतश्रेणी / $2^2 \sqrt{(\text{जगतश्रेणी})}$	उत्कृष्ट नील	2 बार	6 माह
उन नरकों में जीवों की उत्कृष्ट स्थिति क्रम से एक, तीन, सात, दस, सत्रह, बाईस और तैंतीस सागरोपम है ॥ त.सू. ३/६ ॥									
अल्प-बहुत्व आधारः श्री कार्तिकेयअनुप्रेक्षा, गाथाः 159, श्री गोमटसार, गाथाः 153,154									



+ स्वामित्व - स्वामित्व

अन्वयार्थ : स्वामित्व

विशेष :

एक जीव की अपेक्षा स्वामित्व		
मार्गणा		कारण
गति	नरक	नरक-गति नाम-कर्म का उदय
	तिर्यच	तिर्यच-गति नाम-कर्म का उदय
	मनुष्य	तिर्यच-गति नाम-कर्म का उदय
	देव	देव-गति नाम-कर्म का उदय
	सिद्ध	क्षायिक लब्धि
इन्द्रिय	एक, दो, तीन, चार, पंच इन्द्रिय	क्षयोपशम लब्धि
	अनिन्द्रिय	क्षायिक लब्धि
काय	पृथ्वीकायिक	पृथ्वीकायिक (एकेंद्रिय जाति) नाम-कर्म का उदय
	जलकायिक	जलकायिक (एकेंद्रिय जाति) नाम-कर्म का उदय
	अग्निकायिक	अग्निकायिक (एकेंद्रिय जाति) नाम-कर्म का उदय
	वायुकायिक	वायुकायिक (एकेंद्रिय जाति) नाम-कर्म का उदय
	वनस्पतिकायिक	वनस्पतिकायिक (एकेंद्रिय जाति) नाम-कर्म का उदय
	त्रसकायिक	त्रसकायिक नाम-कर्म का उदय
	अकायिक	क्षायिक लब्धि
योग	मन, वचन, काय योगी	क्षयोपशम लब्धि
	अयोगी	क्षायिक लब्धि
वेद	स्त्री, पुरुष, नपुंसक वेदी	चारित्र-मोहनीय कर्म का उदय
	अपगत वेदी	औपशमिक व क्षायिक लब्धि
कषाय	क्रोध, मान, माया, लोभ	चारित्र-मोहनीय कर्म का उदय
	अकषायी	औपशमिक व क्षायिक लब्धि
ज्ञान	मत्पज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगावधि, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्यय	क्षायोपशमिक लब्धि
	केवलज्ञानी	क्षायिक लब्धि

संयम	संयत, सामायिक, छेदोपस्थापना	औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक लब्धि
	परिहार-विशुद्धि, संयता-संयत	क्षायोपशमिक लब्धि
	सूक्ष्म-साम्परायिक, यथाख्यात	औपशमिक व क्षायिक लब्धि
	असंयत	संयम-घाति कर्म का उदय
दर्शन	चक्षु, अचक्षु, अवधि	क्षायोपशमिक लब्धि
	केवल	क्षायिक लब्धि
लेश्या	कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल	औदयिक भाव
	अलेश्यिक	क्षायिक लब्धि
भव्य	भव्य-सिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक	पारिणामिक भाव
	न भव्य-सिद्धिक, न अभव्य-सिद्धिक	क्षायिक लब्धि
सम्यक्त्व	सम्यग्दृष्टि	औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक लब्धि
	क्षायिक सम्यग्दृष्टि	क्षायिक लब्धि
	वेदक सम्यग्दृष्टि	क्षायोपशमिक लब्धि
	औपशमिक सम्यग्दृष्टि	औपशमिक लब्धि
	सासादन सम्यग्दृष्टि	पारिणामिक भाव
	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	क्षायोपशमिक लब्धि
	मिथ्यादृष्टि	मिथ्यात्व कर्म का उदय
संज्ञी	संज्ञी	क्षायोपशमिक लब्धि
	असंज्ञी	औदयिक भाव
	न संज्ञी न असंज्ञी	क्षायिक लब्धि
आहार	आहारक	औदयिक भाव
	अनाहारक	औदयिक भाव तथा क्षायिक लब्धि



+ कालानुगम -

कालानुगम

अन्वयार्थ : कालानुगम

विशेष :

एक जीव की अपेक्षा कालानुगम				
मार्गणा			जघन्य	उत्कृष्ट
गति	नरक	सामान्य	१० हजार वर्ष	३३ सागर
		रत्नप्रभा		१ सागर
		शर्कराप्रभा	१ समय + १ सागर	३ सागर
		बालुकाप्रभा	१ समय + ३ सागर	७ सागर
		पंकप्रभा	१ समय + ७ सागर	१० सागर
		धूमप्रभा	१ समय + १० सागर	१७ सागर
		तमप्रभा	१ समय + १७ सागर	२२ सागर
		महातमप्रभा	१ समय + २२ सागर	३३ सागर
	तिर्य्यच	सामान्य	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
		पंचेन्द्रिय पर्याप्त	अन्तर्मुहर्त	पृथक्त्व पूर्व-कोटि + तीन पत्य
		पंचेन्द्रिय अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अन्तर्मुहर्त
	मनुष्य	पर्याप्त	अन्तर्मुहर्त	पृथक्त्व पूर्व-कोटि + तीन पत्य
		अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अन्तर्मुहर्त
	देव	सामान्य	१० हजार वर्ष	३३ सागर

		भवनवासी		डेढ़ (१ १/२) सागर	
		व्यन्तर			
		ज्योतिष	पल्य के आठवें भाग	डेढ़ (१ १/२) पल्य	
		सौधर्म-ईशान	डेढ़ (१ १/२) पल्य	अढ़ाई सागर	
		सनत्कुमार, माहेन्द्र	अढ़ाई सागर	साढ़े सात सागर	
		ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर	साढ़े सात सागर	साढ़े दस सागर	
		लान्तव, कापिष्ठ	साढ़े दस सागर	साढ़े चौदह सागर	
		शुक्र, महाशुक्र	साढ़े चौदह सागर	साढ़े सोलह सागर	
		शतार, सहस्रार	साढ़े सोलह सागर	साढ़े अठारह सागर	
		आनत, प्राणत	साढ़े अठारह सागर	बीस सागर	
		आरण, अच्युत	१ समय + बीस सागर	२२ सागर	
		१ ग्रेवैयिक - सुदर्शन	२२ सागर	२३ सागर	
		२ ग्रेवैयिक - अमोघ	२३ सागर	२४ सागर	
		३ ग्रेवैयिक - सुप्रबुद्ध	२४ सागर	२५ सागर	
		४ ग्रेवैयिक - यशोधर	२५ सागर	२६ सागर	
		५ ग्रेवैयिक - सुभद्र	२६ सागर	२७ सागर	
		६ ग्रेवैयिक - सुविशाल	२७ सागर	२८ सागर	
		७ ग्रेवैयिक - सुमनस	२८ सागर	२९ सागर	
		८ ग्रेवैयिक - सौमनस	२९ सागर	३० सागर	
		९ ग्रेवैयिक - प्रीतिकर	१ समय + ३० सागर	३१ सागर	
		नौ अनुदिश	३२ सागर		
		अनुत्तर - विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित	१ समय + ३२ सागर	३३ सागर	
		अनुत्तर - सर्वार्थसिद्धि	३३ सागर		
इन्द्रिय	एकेंद्रिय	सामान्य	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)	
		बादर		(अंगुल/असंख्यात) असंख्याता-असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल	
		बादर पर्याप्त	अन्तर्मुहर्त	संख्यात हजार वर्ष	
		बादर अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अन्तर्मुहर्त	
		सूक्ष्म		असंख्यात लोकप्रमाण काल	
		सूक्ष्म पर्याप्त	अन्तर्मुहर्त	अन्तर्मुहर्त	
		सूक्ष्म अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)		
	विकलत्रय	पर्याप्त	अन्तर्मुहर्त	संख्यात हजार वर्ष	
		अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अन्तर्मुहर्त	
	पंचेन्द्रिय	सामान्य		पृथक्त्व पूर्व-कोटि + हजार सागर	
		पर्याप्त	अन्तर्मुहर्त	पृथक्त्व सौ सागर	
		अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अन्तर्मुहर्त	
काय	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु		अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	असंख्यात लोकप्रमाण काल	
	वनस्पति			अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)	
	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति	बादर प्रत्येक	अन्तर्मुहर्त	कर्म-स्थिति प्रमाण काल (७० कोड़ा-कोडी सागर)	
		बादर प्रत्येक पर्याप्त	अन्तर्मुहर्त	संख्यात हजार वर्ष	
		बादर प्रत्येक अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अन्तर्मुहर्त	
		सूक्ष्म पर्याप्त	अन्तर्मुहर्त		
		सूक्ष्म अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)		
	निगोद			ढाई पुद्गल परिवर्तन	
	बादर निगोद	सामान्य	कर्म-स्थिति प्रमाण काल (७० कोड़ा-कोडी सागर)		
		पर्याप्त	अन्तर्मुहर्त		
		अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अन्तर्मुहर्त	
	त्रस	सामान्य		पृथक्त्व पूर्व-कोटि + दो हजार सागर	
		पर्याप्त		अन्तर्मुहर्त	दो हजार सागर
		अपर्याप्त	अन्तर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अन्तर्मुहर्त	
योग	मन, वचन		१ समय	अन्तर्मुहर्त	
	काय	सामान्य	अन्तर्मुहर्त	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)	
		औदारिक	१ समय	अन्तर्मुहर्त कम २२ हजार वर्ष	

		औदारिक-मिश्र, वैक्रियिक, आहारक		अन्तर्मुहर्त	
		वैक्रियिक-मिश्र, आहारक-मिश्र	अन्तर्मुहर्त		
		कर्मण	१ समय	३ समय	
वेद	स्त्री		१ समय	पृथक्त्व सौ पल्य	
	पुरुष		अन्तर्मुहर्त	पृथक्त्व सौ सागर	
	नपुंसक		१ समय	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)	
	अपगत	उपशम		अन्तर्मुहर्त	
		क्षपक		अन्तर्मुहर्त	कुछ कम पूर्व-कोटि वर्ष
कषाय	क्रोध, मान, माया, लोभ		१ समय	अन्तर्मुहर्त	
	अकषायी	उपशम	१ समय	अन्तर्मुहर्त	
		क्षपक	अन्तर्मुहर्त	कुछ कम पूर्व-कोटि वर्ष	
ज्ञान	मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी	अभव्य, अभव्य के सामान भव्य	अनादि-अनन्त		
		भव्य (अनादि मिथ्यादृष्टि)	अनादि-सान्त		
		भव्य (सादि-मिथ्या-दृष्टि)	अन्तर्मुहर्त	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन	
	विभगावधि		१ समय	कुछ कम ३३ सागर	
	मति, श्रुत, अवधि		अन्तर्मुहर्त	कुछ अधिक ६६ सागर	
	मनःपर्यय, केवल		अन्तर्मुहर्त	कुछ कम पूर्व-कोटि वर्ष	
	संयम	संयत, परिहार-विशुद्धि, संयता-संयत		अन्तर्मुहर्त	कुछ कम पूर्व-कोटि वर्ष
सामायिक, छेदोपस्थापना		१ समय	कुछ कम पूर्व-कोटि वर्ष		
सूक्ष्म-साम्पराय			उपशम	अन्तर्मुहर्त	
		क्षपक	अन्तर्मुहर्त	अन्तर्मुहर्त	
यथाख्यात		उपशम	१ समय	अन्तर्मुहर्त	
		क्षपक	अन्तर्मुहर्त	कुछ कम पूर्व-कोटि वर्ष	
असंयत		अभव्य, अभव्य के सामान भव्य		अनादि-अनन्त	
		भव्य (अनादि मिथ्यादृष्टि)		अनादि-सान्त	
		भव्य (सादि-मिथ्या-दृष्टि)		अन्तर्मुहर्त	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
दर्शन	चक्षु-दर्शन		अन्तर्मुहर्त	दो हजार सागर	
	अचक्षु-दर्शन	अभव्य, अभव्य के सामान भव्य	अनादि-अनन्त		
		भव्य (अनादि मिथ्यादृष्टि)	अनादि-सान्त		
	अवधि-दर्शन		अन्तर्मुहर्त	कुछ अधि ६६ सागर	
	केवल-दर्शन			कुछ कम पूर्व-कोटि वर्ष	
लेश्या	कृष्ण		अन्तर्मुहर्त	कुछ अधिक ३३ सागर	
	नील			कुछ अधिक १७ सागर	
	कापोत			कुछ अधिक ७ सागर	
	पीत			कुछ अधिक २ सागर	
	पद्म			कुछ अधिक १८ सागर	
	शुक्ल			कुछ अधिक ३३ सागर	
भव्य	भव्य-सिद्धिक	अनादि-मिथ्यादृष्टि	अनादि-सान्त		
		सादि-मिथ्यादृष्टि	सादि-सान्त		
	अभव्य-सिद्धिक		अनादि-अनन्त		
सम्यक्त्व	सम्यग्दृष्टि	सामान्य	अन्तर्मुहर्त	कुछ अधिक ६६ सागर	
		क्षायिक		दो पूर्व-कोटि - आठ वर्ष + २ अन्तर्मुहर्त + ३३ सागर	
		वेदक		६६ सागर	
		उपशम	अन्तर्मुहर्त		
	सम्यग्मिथ्यादृष्टि		अन्तर्मुहर्त		
	सासादन सम्यग्दृष्टि		१ समय	६ आवली	
	मिथ्यादृष्टि	अभव्य, अभव्य के सामान भव्य		अनादि-अनन्त	
		भव्य (अनादि मिथ्यादृष्टि)		अनादि-सान्त	
		भव्य (सादि-मिथ्या-दृष्टि)		अन्तर्मुहर्त	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
संज्ञी	संज्ञी		अंतर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	पृथक्त्व सौ सागर	
	असंज्ञी			अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)	
आहार	आहारक		अंतर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल) - तीन समय	अंगुल के असंख्यातें भाग काल (असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी)	



+ अन्तरानुगम -

अन्तरानुगम

अन्वयार्थ : अन्तरानुगम

विशेष :

एक जीव की अपेक्षा अन्तरानुगम				
मार्गणा			जघन्य	उत्कृष्ट
गति	नरक		अंतर्मुहर्त	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
	तिर्यंच		अंतर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	पृथक्त्व सौ सागर
	मनुष्य / पंचेन्द्रिय तिर्यंच			अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
	देव	ईशान तक	अंतर्मुहर्त	
		सनत्कुमार-माहेन्द्र	पृथक्त्व मुहर्त	
		ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर	पृथक्त्व दिवस	
		शुक्र-महाशुक्र	पृथक्त्व पक्ष	
		आनत-अच्युत	पृथक्त्व मास	
		नौ-त्रैवेयक	पृथक्त्व वर्ष	
अनुदिश-अपराजित				
	सर्वार्थ-सिद्धि	-	साधिक दो सागर	
			-	
इन्द्रिय	एकेंद्रिय	सामान्य	अंतर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	पृथक्त्व पूर्व-कोटि + दो हजार सागर
		बादर		असंख्यात लोकप्रमाण काल
		सूक्ष्म		असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल
	दो-पांच इन्द्रिय			अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
काय	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु		अंतर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
	वनस्पति	निगोदिया		असंख्यात लोकप्रमाण काल
		प्रत्येक		ढाई पुद्गल परिवर्तन
	त्रस			
योग	मन, वचन		अंतर्मुहर्त	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
	काय	सामान्य	एक समय	अंतर्मुहर्त
		औदारिक, औदारिक-मिश्र		९ अंतर्मुहर्त + २ समय + ३३ सागर
		वैक्रियिक		अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
		वैक्रियिक-मिश्र	साधिक १० हजार वर्ष	
		आहारक, आहारक-मिश्र	अंतर्मुहर्त	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
		कार्मण	तीन समय कम क्षुद्र-भव ग्रहण काल	असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
वेद	स्त्री		क्षुद्र-भव ग्रहण काल	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
	पुरुष		एक समय	
	नपुंसक		अंतर्मुहर्त	पृथक्त्व सौ सागर
	अपगत-वेद	उपशम	अंतर्मुहर्त	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
		क्षपक	-	-
कषाय	क्रोध, मान, माया, लोभ		एक समय	अंतर्मुहर्त
	अकषायी		अंतर्मुहर्त	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
ज्ञान	मत्यज्ञानी-श्रुतअज्ञानी		अंतर्मुहर्त	कुछ कम १३२ सागर
	विभंगावधि			अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)

	मति-श्रुत-अवधि-मनःपर्यय		कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
	केवलज्ञान	-	-
संयम	सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारिविशुद्धि	अंतर्मुहर्त	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
	सूक्ष्म-साम्पराय, यथाख्यात	उपशम श्रेणी	
		क्षपक	-
	असंयत	अंतर्मुहर्त	कुछ कम पूर्व-कोटि
दर्शन	चक्षु-दर्शन	अंतर्मुहर्त	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
	अचक्षु-दर्शन	-	-
	अवधि	अंतर्मुहर्त	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
	केवल	-	-
लेश्या	कृष्ण, नील, कापोत	अंतर्मुहर्त	कुछ-अधिक ३३ सागर
	पीत, पद्म, शुक्ल		अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
भव्य	भव्य-सिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक	-	-
सम्यक्त्व	औपशमिक, वेदक, सम्यग्मिथ्यादृष्टि	अंतर्मुहर्त	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
	क्षायिक	-	-
	सासादन-सम्यक्त्वी	पल्य का असंख्यातवां भाग	कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्तन
	मिथ्यादृष्टि	अंतर्मुहर्त	कुछ कम १३२ सागर
संज्ञी	संज्ञी	अंतर्मुहर्त (क्षुद्र-भव ग्रहण काल)	अनन्त (असंख्यात पुद्गल परिवर्तन)
	असंज्ञी		पृथक्त्व सौ सागर
आहार	आहारक	एक समय	तीन समय
	अनाहारक	तीन समय कम क्षुद्र-भव ग्रहण काल	असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी



+ भंग-विचय -

भंग-विचय

अन्वयार्थ : भंग-विचय

विशेष :

नाना जीवों की अपेक्षा भंगविचय			
मार्गणा			प्रति-समय अस्तित्व
गति	नारकी, तिर्यच, देव		नियम से हैं
	मनुष्य	पर्याप्त	नियम से हैं
		अपर्याप्त	कथंचित हैं कथंचित नहीं
इन्द्रिय	एकेंद्रिय सूक्ष्म-बादर, दो, तीन, चार, पंच इन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त		नियम से हैं
काय	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, निगोद बादर-सूक्ष्म, पर्याप्त अपर्याप्त		नियम से हैं
योग	पांच मनोयोगी, पांच वचनयोगी, काययोगी, औदारिक, औदारिक-मिश्र, वैक्रियिक और कार्मण काययोगी		नियम से हैं
	वैक्रियिक-मिश्र, आहारक, आहारक-मिश्र		कथंचित हैं कथंचित नहीं
वेद	स्त्री, पुरुष, नपुंसक वेदी और अपगत वेदी		नियम से हैं
कषाय	क्रोध, मान, माया, लोभ और अकषायी		नियम से हैं
ज्ञान	मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगावधि, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्यय और केवलज्ञानी		नियम से हैं
संयम	सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार-विशुद्धि, यथाख्यात, संयता-संयत और असंयत		नियम से हैं
	सूक्ष्म-साम्परायिक		कथंचित हैं कथंचित नहीं
दर्शन	चक्षु, अचक्षु, अवधि और केवल		नियम से हैं
लेश्या	कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल		नियम से हैं
भव्य	भव्य-सिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक		नियम से हैं

सम्यक्त्व	सम्यग्दृष्टि, क्षायिक सम्यग्दृष्टि, वेदक सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि	नियम से हैं
	औपशमिक सम्यग्दृष्टि, सासादन सम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि	कथंचित हैं कथंचित नहीं
संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी	नियम से हैं
आहार	आहारक, अनाहारक	नियम से हैं



+ द्रव्य-प्रमाणानुगम -

द्रव्य-प्रमाणानुगम

अन्वयार्थ : द्रव्य-प्रमाणानुगम

विशेष :

द्रव्य-प्रमाणानुगम				
मार्गणा			प्रमाण	
गति	नारकी	सामान्य	द्रव्य	असंख्यात
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
			क्षेत्र	असंख्यात जगत्क्षेत्री
	तिर्य्यच	सामान्य	द्रव्य	अनन्त
			काल	> अनन्तानन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
			क्षेत्र	अनन्तानन्त लोकप्रमाण
		पंचेन्द्रिय	द्रव्य	असंख्यात
			काल	असंख्याता-असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
			क्षेत्र	असंख्यात जगत्क्षेत्री का असंख्यातवां भाग
	मनुष्य	सामान्य	द्रव्य	असंख्यात
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
			क्षेत्र	जगत्क्षेत्री का असंख्यातवां भाग
		पर्याप्त	द्रव्य	> कोडाकोडाकोड़ी < कोडाकोडाकोडाकोड़ी, छठे और सातवें वर्ग के बीच
	देव	सामान्य	द्रव्य	असंख्यात
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
			क्षेत्र	जगत्क्षेत्री / ((२५६ अंगुल) ^२)
		भवनावासी	द्रव्य	असंख्यात
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
			क्षेत्र	असंख्यात जगत्क्षेत्री, जगत्क्षेत्री का असंख्यातवां भाग
		व्यन्तर	द्रव्य	असंख्यात
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
			क्षेत्र	जगत्क्षेत्री / ((संख्यात सौ योजन) ^२)
		ज्योतिषी		देवों के समान
		सौधर्म-ईशान	द्रव्य	असंख्यात
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
			क्षेत्र	असंख्यात जगत्क्षेत्री, जगत्क्षेत्री का असंख्यातवां भाग
		सनत्कुमार, माहेन्द्र		?
		ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर		?
		लान्तव, कापिष्ठ		?
		शुक्र, महाशुक्र		?
		शतार, सहस्रार		?
		आनत-अपराजित	द्रव्य	पत्य के असंख्यातवें भाग
			काल	?

		सर्वार्थसिद्धि	द्रव्य	संख्यात	
इन्द्रिय	एकेन्द्रिय		द्रव्य	अनन्त	
			काल	> अनन्तानन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी	
			क्षेत्र	अनन्तानन्त लोकप्रमाण	
	दो, तीन, चार, पंचेन्द्रिय		द्रव्य	असंख्यात	
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी	
			क्षेत्र	?	
काय	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, बादर वनस्पति प्रत्येक		द्रव्य	असंख्यात लोकप्रमाण	
	पृथ्वी, जल, प्रत्येक वनस्पति	बादर, पर्याप्त	द्रव्य	असंख्यात	
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी	
			क्षेत्र	?	
			द्रव्य	असंख्यात, ?	
			द्रव्य	असंख्यात	
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी	
	वायु		क्षेत्र	असंख्यात जगत्प्रतर, लोक का असंख्यातवां भाग	
			द्रव्य	अनन्त	
			काल	> अनन्तानन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी	
	वनस्पति	निगोद	क्षेत्र	अनन्तानन्त लोकप्रमाण	
			त्रस		द्रव्य
योग			मनोयोगी, (सत्य, असत्य, उभय) वचनयोगी		द्रव्य
	वचनयोगी, अनुभय वचनयोगी		द्रव्य	असंख्यात	
			काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी	
			क्षेत्र	?	
	काययोगी, (औदारिक, औदारिक-मिश्र, कार्मण) काययोगी		द्रव्य	अनन्त	
			काल	> अनन्तानन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी	
			क्षेत्र	अनन्तानन्त लोकप्रमाण	
	वैक्रियिक			देव-राशि - (देव-राशि / संख्यात)	
	वैक्रियिक-मिश्र			देव-राशि / संख्यात	
आहारक			54		
आहारक-मिश्र			संख्यात		
वेद	स्त्री		देवियों से कुछ अधिक		
	पुरुष		देवों से कुछ अधिक		
	नपुंसक	द्रव्य	अनन्त		
		काल	> अनन्तानन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी		
		क्षेत्र	अनन्तानन्त लोकप्रमाण		
अपगत-वेद			अनन्त		
कषाय	क्रोध, मान, माया, लोभ		द्रव्य	अनन्त	
			काल	> अनन्तानन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी	
			क्षेत्र	अनन्तानन्त लोकप्रमाण	
	अकषाय			अनन्त	
ज्ञान	मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी		नपुंसक वेदी जीवों के समान, अनन्त		
	विभगावधि		देवों से कुछ अधिक		
	मति, श्रुत, अवधि	द्रव्य	पत्य के असंख्यातवें भाग		
		काल	आवली का असंख्यातवां भाग, अंतर्मुहूर्त		
	मनःपर्यय		संख्यात		
	केवल		अनन्त		
संयम	संयत, सामायिक, छेदोपस्थापना		पृथक्त्व कोटि		
	परिहार-विशुद्धि		पृथक्त्व सहस्र		
	सूक्ष्म-साम्परायिक		पृथक्त्व शत		
	यथाख्यात-विहार-शुद्धि		पृथक्त्व शत सहस्र		
	संयातासंयत		पत्य के असंख्यातवें भाग		
	असंयत		मत्यज्ञानी के समान, अनन्त		
दर्शन	चक्षु-दर्शन		द्रव्य	असंख्यात	

		काल	असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
		क्षेत्र	?
	अचक्षु-दर्शन		असंयतों के समान, अनन्त
	केवल-दर्शन		केवल-ज्ञानियों के समान, अनन्त
लेश्या	कृष्ण, नील, कापोत		असंयतों के समान, अनन्त
	पीत (तेजो)		ज्योतिषी देवों के समान, असंख्यात
	पद्म		संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिनीयों के संख्यातवें भाग
	शुक्ल		पल्य के असंख्यातावें भाग
भव्य	भव्यसिद्धिक	द्रव्य	अनन्त
		काल	> अनन्तानन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
		क्षेत्र	अनन्तानन्त लोकप्रमाण
	अभव्यसिद्धिक		अनन्त
सम्यक्त्व	सम्यक्त्वी, उपशम, क्षायिक, वेदक, सासादन-सम्यक्त्वी, सम्यग्मिथ्यादृष्टि		पल्य के असंख्यातावें भाग
	मिथ्यादृष्टि		असंयमियों के समान, अनन्त
संज्ञी	संज्ञी		देवों से कुछ अधिक, असंख्यात
	असंज्ञी		असंयमियों के समान, अनन्त
आहार	आहारक / अनाहारक	द्रव्य	अनन्त
		काल	> अनन्तानन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी
		क्षेत्र	अनन्तानन्त लोकप्रमाण



+ क्षेत्रानुगम - क्षेत्रानुगम

अन्वयार्थ : क्षेत्रानुगम

विशेष :

क्षेत्रानुगम				
मार्गणा				क्षेत्र
गति	नारकी	सामान्य	२ स्वस्थान, ४ समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
	तिर्यच	सामान्य	२ स्वस्थान, ४ समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
		पंचेन्द्रिय		लोक का असंख्यातवां भाग
	मनुष्य	पर्याप्त	स्वस्थान, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
		पर्याप्त	समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक
		अपर्याप्त	स्वस्थान, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
	देव	सामान्य	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
इन्द्रिय	एकेन्द्रिय	पर्याप्त / अपर्याप्त / सूक्ष्म	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	एकेन्द्रिय	पर्याप्त / अपर्याप्त / बादर	स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग
			समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	दो, तीन, चार		स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
	पंचेन्द्रिय	पर्याप्त	स्वस्थान, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
			समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक

		अपर्याप्त	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
काय	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु	सूक्ष्म / पर्याप्त / अपर्याप्त	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	पृथ्वी, जल, अग्नि, प्रत्येक वनस्पति	बादर, अपर्याप्त	स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग
			समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
		बादर, पर्याप्त	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
	वायु	बादर, अपर्याप्त	स्वस्थान	लोक के संख्यातवें भाग
			समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
		बादर, पर्याप्त	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक के संख्यातवें भाग
	वनस्पति	निगोद / पर्याप्त / अपर्याप्त / सूक्ष्म	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
			स्वस्थान	लोक के संख्यातवें भाग
		बादर (निगोद / पर्याप्त / अपर्याप्त)	समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	त्रस	पर्याप्त	स्वस्थान, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
			समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक
		अपर्याप्त	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
योग	पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी		स्वस्थान, समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग
	काययोगी, औदारिक-मिश्र काययोगी		स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	औदारिक काययोगी		स्वस्थान, समुद्घात	सर्वलोक
	वैक्रियिक		स्वस्थान, समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग
	वैक्रियिक-मिश्र		स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग
	आहारक		स्वस्थान, समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग
	आहारक-मिश्र		स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग
	कार्मण काययोग			सर्वलोक
वेद	पुरुष, स्त्री		स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
	नपुंसक		स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	अपगत-वेद	स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग	
		समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक	
कषाय	क्रोध, मान, माया, लोभ		स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	अकषाय	स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग	
		समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक	
ज्ञान	मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी		स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	नपुंसक वेदी जीवों के समान, अनन्त
	विभंगावधि, मनःपर्यय		स्वस्थान, समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग
	मति, श्रुत, अवधि		स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
	केवल	स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग	
		समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक	
संयम	संयत, यथाख्यात-विहार-शुद्धि		स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग
			समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक
	सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार-विशुद्धि, सूक्ष्म-साम्परायिक, संयातासंयत		स्वस्थान, समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग
	असंयत		स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
दर्शन	चक्षु-दर्शन		स्वस्थान, समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग
			कथंचित उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग

	अचक्षु-दर्शन	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	अवधि	स्वस्थान, समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग
	केवल-दर्शन	स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग
		समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक
लेश्या	कृष्ण, नील, कापोत	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	पीत (तेजो), पद्म	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
	शुक्ल	स्वस्थान, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
		समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक
भव्य	भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
सम्यक्त्व	सम्यक्त्वी, क्षायिक	स्वस्थान, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
		समुद्घात	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक
	उपशम, वेदक, सासादन-सम्यक्त्वी	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग / लोक का असंख्यात बहुभाग / सर्वलोक
	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	स्वस्थान	लोक का असंख्यातवां भाग
	मिथ्यादृष्टि	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
संज्ञी	संज्ञी	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	लोक का असंख्यातवां भाग
	असंज्ञी		सर्वलोक
आहार	आहारक	स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद	सर्वलोक
	अनाहारक		सर्वलोक



अल्प-बहुत्व

अन्वयार्थ : अल्प-बहुत्व

विशेष :

गर्भज पर्याप्त मनुष्य < मनुष्यिनि < सर्वार्थसिद्धि देव << बादर पर्याप्त तेजस्कायिक << अनुत्तर (विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित) < अनुदिश < उपरिम-उपरिम ग्रैवेयक देव < उपरिम-मध्यम ग्रैवेयक देव < अधस्तन ग्रैवेयक देव < मध्यम-उपरिम ग्रैवेयक देव < मध्यम-मध्यम ग्रैवेयक देव < मध्यम-अधस्तन ग्रैवेयक देव < अधस्तन-उपरिम ग्रैवेयक देव < अधस्तन-मध्यम ग्रैवेयक देव < अधस्तन-अधस्तन ग्रैवेयक देव < आरण-अच्युत देव < आनत-प्राणत देव << सप्तम-पृथिवी नारकी << छठी पृथिवी नारकी << शतार-सहस्रार देव << शुक्र-महाशुक्र देव << पंचम-पृथिवी नारकी << लान्तव-कापिष्ठ देव << चतुर्थ पृथिवी नारकी << ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर देव << तृतीय-पृथिवी नारकी << माहेन्द्र देव << सानत्कुमार देव << द्वितीय पृथिवी नारकी << अपर्याप्त मनुष्य << ईशान देव < ईशान देवियाँ < सौधर्म देव < सौधर्म देवियाँ << प्रथम पृथिवी नारकी << भवनवासी देव < भवनवासी देवियाँ << पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिनी << व्यंतर देव < व्यंतर देवियाँ < ज्योतिष देव < ज्योतिष देवियाँ < चतुरिन्द्रिय पर्याप्त << पंचेन्द्रिय पर्याप्त << द्विन्द्रिय पर्याप्त << त्रीन्द्रिय पर्याप्त << पंचेन्द्रिय अपर्याप्त << चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त << त्रीन्द्रिय अपर्याप्त << द्विन्द्रिय अपर्याप्त << बादर प्रत्येक वनस्पतिकायिक << बादर पर्याप्त

निगोदप्रतिष्ठित << बादर पर्याप्त पृथिवीकायिक << बादर पर्याप्त जलकायिक << बादर पर्याप्त वायुकायिक << बादर अपर्याप्त अग्निकायिक << बादर अपर्याप्त प्रत्येक वनस्पति << बादर अपर्याप्त प्रतिष्ठित << बादर अपर्याप्त पृथिवीकायिक << बादर अपर्याप्त जलकायिक << बादर अपर्याप्त वायुकायिक << सूक्ष्म अपर्याप्त अग्निकायिक << सूक्ष्म अपर्याप्त पृथिवीकायिक << सूक्ष्म अपर्याप्त जलकायिक << सूक्ष्म अपर्याप्त वायुकायिक << सूक्ष्म पर्याप्त अग्निकायिक << सूक्ष्म पर्याप्त पृथिवीकायिक << सूक्ष्म पर्याप्त वायुकायिक << सूक्ष्म पर्याप्त जलकायिक <<< सिद्ध जीव <<< बादर पर्याप्त वनस्पतिकायिक << बादर अपर्याप्त वनस्पतिकायिक << बादर वनस्पतिकायिक << सूक्ष्म अपर्याप्त वनस्पतिकायिक < सूक्ष्म पर्याप्त वनस्पतिकायिक < सूक्ष्म वनस्पतिकायिक < वनस्पतिकायिक < निगोद जीव



+ न्याय-वाक्य -

न्याय-वाक्य

अन्वयार्थ : कुछ प्रचलित न्यायों का परिचय अकारादि क्रम से नीचे दिया गया है --

विशेष :

[प्रमेय] (Theorem) का शाब्दिक अर्थ है - ऐसा कथन जिसे प्रमाण द्वारा सिद्ध किया जा सके। इसे साध्य भी कहते हैं।

गणित में (और विशेषकर रेखागणित में) बहुत से प्रमेय हैं। प्रमेयों की विशेषता है कि उन्हें स्वयंसिद्धों (axioms) एवं सामान्य तर्क (deductive logic) से सिद्ध किया जा सकता है।

1. **अजाकृपाणीय न्याय** - कहीं तलवार लटकती थी, नीचे से बकरा गया और वह संयोग से उसकी गर्दन पर गिर पड़ी। जहाँ दैवसंयोग से कोई विपत्ति आ पड़ती है वहाँ इसका व्यवहार होता है।
2. **अजातपुत्रनामोत्कीर्तन न्याय** - अर्थात् पुत्र न होने पर भी नामकरण होने का न्याय। जहाँ कोई बात होने पर भी आशा के सहारे लोग अनेक प्रकार के आयोजन बाँधने लगते हैं वहाँ यह कहा जाता है।
3. **अध्यारोप न्याय** - जो वस्तु जैसी न हो उसमें वैसे होने का (जैसे रज्जु में सर्प होने का) आरोप। वेदांत की पुस्तकों में इसका व्यवहार मिलता है।
4. **अंधकूपपतन न्याय** - किसी भले आदमी ने अंधे को रास्ता बतला दिया और वह चला, पर जाते जाते कूँ में गिर पड़ा। जब किसी अनधिकारी को कोई उपदेश दिया जाता है और वह उसपर चलकर अपने अज्ञान आदि के कारण चूक जाता है या अपनी हानि कर बैठता है तब यह कहा जाता है।

5. **अंधगज न्याय** - कई जन्मांधों ने हाथी कैसा होता है यह देखने के लिये हाथी को टठोला। जिसने जो अंग टटोल पाया उसने हाथी का आकार उसी अंग का सा समझा। जिसने पूँछ टटोली उसने रस्सी के आकार का, जिसने पैर टटोला उसने खंभे के आकार रस्सी के आकार का, जिसने पैर टटोला उसने खंभे के आकार का समझा। किसी विषय के पुर्ण अंग का ज्ञान न होने पर उसके संबंध में जब अपनी अपनी समझ के अनुसार भिन्न भिन्न बातें कही जाती हैं तब इस उक्ति का प्रयोग करते हैं।
6. **अंधगोलांगूल न्याय** - एक अंधा अपने घर के रास्ते से भटक गया था। किसी ने उसके हाथ में गाय की पूँछ पकड़ाकर कह दिया कि यह तुम्हें तुम्हारे स्थान पर पहुँचा देगी। गाय के इधर उधर दौड़ने से अंधा अपने घर तो पहुँचा नहीं, कष्ट उसने भले ही पाया। किसी दुष्ट या मूर्ख के उपदेश पर काम करके जब कोई कष्ट या दुःख उठाता है तब यह कहा जाता है।
7. **अंधचटक न्याय** - अंधे के हाथ बटेर।
8. **अंधपरंपरा न्याय** - जब कोई पुरुष किसी को कोई काम करते देखकर आप भी वही काम करने लगे तब वहाँ यह कहा जाता है।
9. **अंधपंगु न्याय** - एक ही स्थान पर जानेवाला एक अंधा और एक लँगड़ा यदि मिल जायँ तो एक दुसरे की सहायता से दोनों वहाँ पहुँच सकते हैं। सांख्य में जड़ प्रकृति और चेतन पुरुष के संयोग से सृष्टि होने के दृष्टांत में यह उक्ति कही गई है।
10. **अपवाद न्याय** - जिस प्रकार किसी वस्तु के संबंध में ज्ञान हो जाने से भ्रम नहीं रह जाता उसी प्रकार। (वेदांत)।
11. **अपराहृच्छाया न्याय** - जिस प्रकार दोपहर की छाया बराबर बढ़ती जाती है उसी प्रकार सज्जनों की प्रीति आदि के संबंध में यह न्याय कहा जाता है।
12. **अपसारिताग्निभूतल न्याय** - जमीन पर से आग हटा लेने पर भी जिस प्रकार कुछ देर तक जमीन गरम रहती है उसी प्रकार धनी धन के न रह जाने पर भी कुछ दिनों तक अपनी अकड़ रखता है।
13. **अरण्यरोदन न्याय** - जंगल में रोने के समान बात। जहाँ कहने पर कोई ध्यान देनेवाला न हो वहाँ इसका प्रयोग होता है।
14. **अर्कमधु न्याय** - यदि मदार से ही मधु मिल जाय तो उसके लिये अधिक परिश्रम व्यर्थ है। जो कार्य सहज में हो उसके लिये इधर उधर वहुत श्रम करने की आवश्यकता नहीं।
15. **अर्द्धजरतीय न्याय** - एक ब्राह्मण देवता अर्धकष्ट से दुःख हो नित्य अपनी गाय लेकर बाजार में बेचने जाते पर वह न बिकती। बात यह थी कि अवस्था पूछने पर वे उसकी बहुत अवस्था बतलाते थे। एक दिन एक आदमी ने उनसे न बिकने का कारण पूछा। ब्राह्मण ने कहा जिस प्रकार आदमी की अवस्था अधिक होने पर उसकी कदर बढ़ जाती है उसी प्रकार मैंने गाय के संबंध में भी समझा था। उसने आगे ऐसा न कहने की सलाह

दी। ब्राह्मण ने सोचा कि एक बार गाय को बुढ़ी कहकर अब फिर जवान कैसे कहूँ। अंत में उन्होंने स्थिर किया कि आत्मा तो बुढ़ी होती नहीं देह बुढ़ी होती है। अतः इसे मैं 'आधी बुढ़ी आधी जवान' कहूँगा। जब किसी की कोई बात इस पक्ष में भई और उस पक्ष में भी हो तब यह उक्ति कही जाती है।

16. **अशोकवनिका न्याय** - अशोक-वन में जाने के समान (जहाँ छाया सौरम आदि सब कुछ प्राप्त हो)। जब किसी एक ही स्थान पर सब-कुछ प्राप्त हो जाय और कहीं जाने की आवश्यकता न हो तब यह कहा जाता है।
17. **अश्मलोष्ट न्याय** - अर्थात् तराजू पर रखने के लिये पत्थर तो ढेले से भी भारी है। यह विषमता सूचित करने के अवसर पर ही कहा जाता है। जहाँ दो वस्तुओं में सापेक्षिकता सूचित करनी होती है। वहाँ 'पाषाणेष्टिक न्याय' कह जाता है।
18. **अस्नेहदीप न्याय** - बिना तेल के दीये की सी बात। थोड़े ही काल रहनेवाली बात देखकर यह कहा जाता है।
19. **अस्नेहदप न्याय** - साँप के कुंडल मारकर बैठने के समान। किसी सवाभाविक बात पर।
20. **अहि नकुल न्याय** - साँप नेवले के समान। स्वाभाविक विरोध या बैर सूचित करने के लिये।
21. **आकाशापरिच्छिन्नत्व न्याय** - आकाश के समान अपरिच्छिन्न।
22. **आभ्राणक न्याय** - लोकप्रवाद के समान।
23. **आम्रवण न्याय** - जिस प्रकार किसी वन में यदि आम के पेड़ अधिक होते हैं तो उसे 'आम का वन' ही कहते हैं, यद्यपि और भी पेड़ उस वन में रहते हैं, उसी प्रकार जहाँ औरों को छोड़ प्रधान वस्तु का ही उल्लेख किया जाता है वहाँ यह उक्ति कही जाती है।
24. **उत्पाटितदतनाग न्याय** - दाँत तोड़े हुए साँप के समान। कुछ करने-धरने या हानि पहुँचाने में असमर्थ हुए मनुष्य के संबंध में।
25. **उदकनिमज्जन न्याय** - कोई दोषी है या निर्दोष इसकी एक दिव्य परीक्षा प्राचीन काल में प्रचलित थी। दोषी को पानी में खड़ा करके किसी ओर बाणा छोड़ते थे और बाण छोड़ने के साथ ही अभियुक्त को तबतक डूबे रहने के लिये कहते थे जबतक वह छोड़ा हुआ बाण वहाँ से फिर छूटने पर लौट न आवे। यदि इतने बीच में डूबनेवाले का कोई अंग बाहर न दिखाई पड़ा तो उसे निर्दोष समझते थे। जाहाँ सत्यास्तय की बात आती है वहाँ यह न्याय कहा जाता है।
26. **उभयतः पाशरज्जु न्याय** - जहाँ दोनों ओर विपत्ति हो अर्थात् दो कर्तव्यपक्षों में से प्रत्येक में दुःख हो वहाँ इसका व्यवहार होता है। 'साँप छछूँदर की गति'।

27. **उष्टकंटक भक्षण न्याय** - जिस प्रकार थोड़े से सुख के लिये ऊँट काँटे खाने का कष्ट उठाता है उसी प्रकार जहाँ थोड़े से सुख के लिये अधिक कष्ट उठाया जाता है वहाँ यह कहावत कही जाती है।
28. **ऊपरवृष्टि न्याय** - किसी बात का जहाँ कोई फल न हो वहाँ कहा जाता है।
29. **कंठचामीकर न्याय** - गले में सोने का हार हो और उसे इधर उधर दूढ़ता फिरे। आनंदस्वरूप ब्रह्म के अपने में रहते भी अज्ञानवश सुख के लिये अनेक प्रकार के दुःख भोगने के दृष्टान्त में वेदांती कहते हैं।
30. **कदंबगोलक न्याय** - जिस प्रकार कदंब के गोले में सब फूल एक साथ हो जाते हैं, उसी प्रकार जहाँ कई बातें एक साथ हो जाती हैं वहाँ इसे कहते हैं। कुछ नैयायिक शब्दोत्पत्ति में कई वर्णों के उच्चारण एक साथ मानकर उसके दृष्टान्त में यह कहते हैं। यह भी कहते हैं कि जिस प्रकार कदंब में सब तरफ किजल्क होते हैं वैसे शब्द जहाँ उत्पन्न होता है उसके सभी ओर उसकी तरंगों का प्रसार होता है।
31. **कदलीफल न्याय** - केला काटने पर ही फलता है इसी प्रकार नीच सीधे कहने से नहीं सुनते।
32. **कफोनिगुड न्याय** - सूत न कपास जुलाहों से मटकौवल।
33. **करकंकण न्याय** - 'कंकण' कहने से ही हाथ के गहने का बोध हो जाता है, 'कर' कहने की आवश्यकता नहीं। पर कर कंकण कहते हैं जिसका अर्थ होता है 'हाथ में पड़ा हुआ कड़ा'। इस प्रकार का जहाँ अभिप्राय होता है वहाँ यह न्याय कहा जाता है।
34. **काकतालीय न्याय** - किसी ताड़ के पेड़ के नीचे कोई पथिक लेटा था और ऊपर एक कौवा बैठा था। कौवा किसी ओरको उड़ा और उसके उड़ने के साथ ही ताड़ का एक पका हुआ फल नीचे गिरा। यद्यपि फल पककर आपसे आप गिरा था तथापि पथिक ने दोनों बातों को साथ होते देख यही समझा कि कौवे के उड़ने से ही तालफल गिरा। जहाँ दो बातें संयोग से इस प्रकार एक साथ हो जाती हैं वहाँ उनमें परस्पर कोई संबंध न होते हुए भी लोग संबंध समझ लेते हैं। ऐसा संयोग होने पर यह कहावत कही जाती है।
35. **काकदध्युपघातक न्याय** - 'कौवे से दही बचाना' कहने से जिस प्रकार 'कुत्ते, बिल्ली आदि सब जंतुओं से बचाना' समझ लिया जाता है उसी प्रकार जहाँ किसी वाक्य का अभिप्राय होता है वहाँ यह उक्ति कही जाती है।
36. **काकदंतगवेषण न्याय** - कौवे का दाँत ढूँढ़ना निष्फल है अतः निष्फल प्रयत्न के संबंध में यह न्याय कहा जाता है।
37. **काकाक्षिगोलक न्याय** - कहते हैं, कौवे के एक ही पुतली होती है जो प्रयोजन के अनुसार कभी इस आँख में कभी उस आँख में जाती है। जहाँ एक ही वस्तु दो स्थानों में कार्य करे वहाँ के लिये यह कहावत है।

38. **कारणगुणप्रक्रम न्याय** - कारण का गुणकार्य में भी पाया जाता है। जैसे सूत का रूप आदि उससे बुने कपड़े में।
39. **कुशकाशावलंबन न्याय** - जैसे डूबता हुआ आदमी कुश काँस जो कुछ पाता है उसी को सहारे के लिये पकड़ता है, उसी प्रकार जहाँ कोई दृढ़ आधार न मिलने पर लोग इधर उधर की बातों का सहारा लेते हैं वहाँ के लिये यह कहावत है। 'डूबते को तिनके का सहारा' बोलते भी हैं।
40. **कूपखानक न्याय** - जैसे कूआँ खोदनेवाले की देह में लगा हुआ कीचड़ उसी कूँ के जल में साफ हो जाता है उसी प्रकार राम, कृष्ण आदि को भिन्न भिन्न रूपों में समझने से ईश्वर में भेद बुद्धि का जो द्वेष लगता है वह उन्हीं की उपासना द्वारा ही अद्वैतबुद्धि हो जाने पर मिट जाता है।
41. **कूपमंडूक न्याय** - समुद्र का मेढक किसी कूँ में जा पड़ा। कूँ के मेढक ने पूछा 'भाई ! तुम्हारा समुद्र कितना बड़ा है।' उसने कहा 'बहुत बड़ा।' कूँ के मेढक ने पूछा 'इस कूँ के इतना बड़ा।' समुद्र के मेढक ने कहा 'कहाँ कूआँ, कहाँ समुद्र।' समुद्र से बड़ी कोई वस्तु पृथ्वी पर नहीं। इसपर कूँ का मेढक जो कूँ से बड़ी कोई वस्तु जानता ही न था बिगड़कर बोला 'तुम झूठे हो, कूँ से बड़ी कोई वस्तु हो नहीं सकती।' जहाँ परिमित ज्ञान के कारण कोई अपनी जानकारी के ऊपर कोई दूसरी बात मानता ही नहीं वहाँ के लिये यह उक्ति है।
42. **कूर्मांग न्याय** - जिस प्रकार कछुआ जब चाहता है तब अपने सब अंग भीतर समेट लेता है और जब चाहता है बाहर करता है उसी प्रकार ईश्वर सृष्टि और लय करता है।
43. **कैमुतिक न्याय** - जिसने बड़े-बड़े काम किए उसे कोई छोटा काम करते क्या लगता है। उसी के दृष्टांत के लिये यह उक्ति कही जाती है
44. **कौंडिन्य न्याय** - यह अच्छा है पर ऐसा होता तो और भी अच्छा होता।
45. **गजभुक्त कपित्थ न्याय** - हाथी के खाए हुए कैथ के समान ऊपर से देखने में ठीक पर भीतर भीतर निःसार और शून्य।
46. **गडुलिकाप्रवाह न्याय** - भेडिया धसान।
47. **गणपति न्याय** - एक बार देवताओं में विवाद चला कि सबमें पूज्य कौन है। ब्रह्मा ने कहा जो पृथ्वी की प्रदक्षिणा पहले कर आवे वही श्रेष्ठ समझा जाय। सब देवता अपने अपने वाहनों पर चले। गणेश जी चूहे पर सवार सबके पीछे रहे। इतने में मिले नारद। उन्होंने गणेश जी को युक्ति बताई कि राम नाम लिखकर उसी की प्रदक्षिणा करके चटपट ब्रह्मा के पास पहुँच जाओ। गणपति ने ऐसा ही किया और देवताओं में वे प्रथम पूज्य हुए। इसी से जहाँ थोड़ी सी युक्ति से बड़ी भारी बात हो जाय वहाँ इसका प्रयोग करते हैं।
48. **गतानुगतिक न्याय** - कुछ ब्राह्मण एक घाट पर तर्पण किया करते थे। वे अपना अपना कुश एक ही स्थान पर रख देते थे जिससे एक का कुश दूसरा ले लेता था। एक दिन

पहचान के लिये एक ने अपने कुश को ईंट से दबा दिया। उसकी देखा देखी दूसरे दिन सबने अपने कुश पर ईंट रखी। जहाँ एक की देखादेखी लोग कोई काम करने लगते हैं वहाँ यह न्याय कहा जाता है।

49. **गुड़जिहिका न्याय** - जिस प्रकार बच्चे को कड़वी औषध खिलाने के लिये उसे पहले गुड़ देकर फुसलाते हैं उसी प्रकार जहाँ अरुचिकर या कठिन काम कराने के लिये पहले कुछ प्रलोभन दिया जाता है वहाँ इस उक्ति का प्रयोग होता है।
50. **गोवलीरवर्द न्याय** - 'वलीवर्द' शब्द का अर्थ है बैल। जहाँ यह शब्द गो के साथ हो वहाँ अर्थ और भी जल्दी खुल जाता है। ऐसे शब्द जहाँ एक साथ होते हैं वहाँ के लिये यह कहावत है।
51. **घटकुटीप्राभात न्याय** - एक बनिया घाट के महसूल से बचने के लिये ठीक रास्ता छोड़ ऊबड़खाबड़ स्थानों में रातभर भटकता रहा पर सबेरा होते होते फिर उसी महसूल की छावनी पर पहुँचा और उसे महसूल देना पड़ा। जहाँ एक कठिनाई से बचने के लिये अनेक उपाय निष्फल हों और अंत में उसी कठिनाई में फँसना पड़े वहाँ यह न्याय कहा जाता है।
52. **घटप्रदीप न्याय** - घड़ा अपने भीतर रखे हुए दीप का प्रकाश बाहर नहीं जाने देता। जहाँ कोई अपना ही भला चाहता है दूसरे का उपकार नहीं करता यहाँ यह प्रयुक्त होता है।
53. **घुणाक्षर न्याय** - घुनों के चालने से लकड़ी में अक्षरों के से आकार बन जाते हैं, यद्यपि घुन इन उद्देश्य से नहीं काटते कि अक्षर बनें। इसी प्रकार जहाँ एक काम करने में कोई दूसरी बात अनायस हो जाय वहाँ यह कहा जाता है।
54. **चंपकपटवास न्याय** - जिस कपड़े में चंपे का फूल रखा हो उसमें फूलों के न रहने पर भी बहुत देर तक महक रहती है। इसी प्रकार विषय-भोग का संस्कार भी बहुत काल तक बना रहता है।
55. **जलतरंग न्याय** - अलग नाम रहने पर भी तरंग जल से भिन्न गुण की नहीं होती। ऐसा ही अभेद सूचित करने के लिये इस उक्ति का व्यवहार होता है।
56. **जलतुंबिका न्याय** - (क) तूँबी पानी में नहीं डूबती, डुबाने से ऊपर आ जाती है। जहाँ कोई बात छिपाने से छिपनेवाली नहीं होती वहाँ इसे कहते हैं। (ख) तूँबी के ऊपर मिट्टी कीचड़ आदि लपेटकर उसे पानी में डाले तो वह डूब जाती है पर कीचड़ धोकर पानी में डालें तो नहीं डूबती। इसी प्रकार जीव देहादि के नलों से युक्त रहने पर संसार सागर में निमग्न हो जाता है और मल आदि छूटने पर पार हो जाता है।
57. **जलानयन न्याय** - पानी 'लाओ' कहने से उसके साथ बरतन का लाना भी समझ लिया जाता है क्योंकि बरतन के बिना पानी आवेगा किसमें।
58. **तिलतंडुल न्याय** - चावल और तिल की तरह मिली रहने पर भी अलग दिखाई देनेवाली वस्तुओं के संबंध में इसका प्रयोग होता है।

59. **तृणजलौका न्याय** - घास और जोंक का न्याय

60. **दंडचक्र न्याय** - जैसे घड़ा बनने में दंड, चक्र आदि कई कारण हैं वैसे ही जहाँ कोई बात अनेक कारणों से होती है वहाँ यह उक्ति कही जाती है।

61. **दंडापूप न्याय** - कोई डंडे में बँधे हुए मालपूए छोड़कर कहीं गया। आने पर उसने देखा कि डंडे का बहुत सा भाग चूहे खा गए हैं। उसने सोचा कि जब चूहे डंडा तक खा गए तब मालपूए को उन्होंने कब छोड़ा होगा। जब कोई दुष्कर और कष्टसाध्य कार्य हो जाता है तब उसके साथ ही लगा हुआ सुखद और सहज कार्य अवश्य ही हुआ होगा यही सूचित करने के लिये यह कहावत कहते हैं।

62. **दशम न्याय** - दस आदमी एक साथ कोई नदी तैरकर पार गए। पार जाकर वे यह देखने के लिये सबको गिनने लगे कि कोई छूटा या वह तो नहीं गया। पर जो गिनता वह अपने को छोड़ देता इससे गिनने में नौ ही ठहरते। अंत में उस एक खोए हुए के लिये सबने रोना शुरू किया। एक चतुर पथिक ने आकर उनसे फिर से गिनने के लिये कहा। जब एक उठकर नौ तक गिन गया तब पथिक ने कहा 'दसवें तुम'। इसपर सब प्रसन्न हो गए। वेदांती इस न्याय का प्रयोग यह दिखाने के लिये करते हैं कि गुरु के 'तत्त्वमसि' आदि उपदेश सुनने पर अज्ञान और तज्जनित दुःख दूर हो जाता है।

63. **देहलीदीपक न्याय** - देहली पर दीपक रखने से भीतर और बाहर दोनों ओर उजाला रहता है। जहाँ एक ही आयोजन से दो काम सधें या एक शब्द या बात दोनों ओर लगे वहाँ इस न्याय का प्रयोग होता है।

64. **नष्टाश्वरदग्धरथ न्याय** - संस्कृत शास्त्रों में प्रसिद्ध एक न्याय जिसका तात्पर्य है, दो आदमियों का इस प्रकार मिलकर काम करना जिसमें दोनों एके दूसरे की चीजों का उपयोग करके अपना उद्देश्य सिद्ध करें। यह न्याय निम्नलिखित घटना या कहानी के आधार पर है। दो आदमी अलग-अलग रथ पर सवार होकर किसी वन में गए। वहाँ संयोगवश आग लगने के कारण एक आदमी का रथ जल गया और दूसरे का घोड़ा जल गया। कुछ समय के उपरांत जब दोनों मिले तब एक के पास केवल घोड़ा और दूसरे के पास केवल रथ था। उस समय दोनों ने मिलकर एक दूसरे की चीज का उपयोग किया। घोड़ा रथ में जोता गया और वे दोनों निर्दिष्ट स्थान तक पहुँच गए। दोनों ने मिलकर काम चला लिया। इस प्रकार जहाँ दो आदमी मिलकर एक दूसरे की त्रुटि की पूर्ति करके काम चलाते हैं वहाँ इसे कहते हैं।

65. **नारिकेलफलांबु न्याय** - नारिकेल के फल में जिस प्रकार न जाने कहाँ से कैसे जल आ जाता है उसी प्रकार लक्ष्मी किस प्रकार आती है नहीं जान पड़ता।

66. **निम्नगाप्रवाह न्याय** - नदी का प्रवाह जिस ओर को जाता है उधर रुक नहीं सकता। इसी प्रकार के अनिवार्य क्रम के दृष्टांत में यह कहावत है।

67. **नृपनापितपुत्र न्याय** - किसी राजा के यहाँ एक नाई नौकर था। एक दिन राजा ने उससे कहा कि कहीं से सबसे सुंदर बालक लाकर मुझे दिखाओ। नाई को अपने पुत्र से बढ़कर

और कोई सुंदर बालक कहीं न दिखाई पड़ा और वह उसी को लेकर राजा के सामने आया। राजा उस काले कलूटे बालक को देख बहुत क्रुद्ध हुआ, पर पीछे उसने सोचा कि प्रेम या राग के वश इसे अपने लड़के सा सुंदर और कोई दिखाई ही न पड़ा। राग के वश जहाँ मनुष्य अंधा हो जाता है और उसे अच्छे बुरे की पहचान नहीं रह जाती वहाँ इस न्याय का प्रयोग होता है।

68. **पंकप्रक्षालन न्याय** - कीचड़ लग जायगा तो धो डालेंगे इसकी अपेक्षा यही विचार अच्छा है कि कीचड़ लगने ही न पावे।
69. **पंजरचालन न्याय** - दस पक्षी यदि किसी पिंजड़े में बंद कर दिए जाय और वे सब एक साथ यत्न करें तो पिंजड़े को इधर उधर चला सकते हैं। दस ज्ञानेन्द्रियाँ और दस कर्मेन्द्रियाँ प्राणरूप क्रिया उत्पन्न करके देह को चलाती हैं इसी के दृष्टान्त में सांख्यवाले उक्त न्याय करते हैं।
70. **पाषाणेष्टक न्याय** - ईंट भारी होती है पर उससे भी भारी पत्थर होता है।
71. **पिष्टपेषण न्याय** - पीसे को पीसना निरर्थक है। किए हुए काम को व्यर्थ जहाँ कोई फिर करता है वहाँ के लिये यह उक्ति है।
72. **प्रदीप न्याय** - जिस प्रकार तेल, बत्ती और आग इन भिन्न भिन्न वस्तुओं के मेल से दीपक जलता है उसी प्रकार सत्व, रज और तम इन परस्पर भिन्न गुणों के सहयोग से देह- धारण का व्यापार होता है। (सांख्य)।
73. **प्रापाणक न्याय** - जिस प्रकार घी, चीनी आदि कई वस्तुओं के एकत्र करने से बढ़िया मिठाई बनती है उसी प्रकार अनेक उपादानों के योग से सुंदर वस्तु तैयार होने के दृष्टान्त में यह उक्ति कही जाती है। साहित्यवाले विभाव, अनुभाव आदि द्वारा रस का परिपाक सूचित करने के लिये इसका प्रयोग प्रायः करते हैं।
74. **प्रासादवासि न्याय** - महल में रहनेवाला यद्यपि कामकाज के लिये नीचे उतरकर बाहर इधर उधर भी जाता है पर उसे प्रसादवासी ही कहते हैं इसी प्रकार जहाँ जिस विषय की प्रधानता होती है वहाँ उसी का उल्लेख होता है।
75. **फलवत्सहकार न्याय** - आम के पेड़ के नीचे पथिक छाया के लिये ही जाता है पर उसे फल भी मिल जाता है। इसी प्रकार जहाँ एक लाभ होने से दूसरा लाभ भी हो वहाँ यह न्याय कहा जाता है।
76. **बहुवृत्ताकृष्ट न्याय** - एक हिरन को यदि बहुत से भेड़िए लगे तो उसके अंग एक स्थान पर नहीं रह सकते। जहाँ किसी वस्तु के लिये बहुत से लोग खींचाखींची करते हैं वहाँ वह यथास्थान वा समूची नहीं रह सकती।
77. **विलवर्तिगोधा न्याय** - जिस प्रकार बिल में स्थित गोह का विभाग आदि नहीं हो सकता उसी प्रकार जो वस्तु अज्ञात है उसके संबंध में भला बुरा कुछ नहीं कहा जा सकता।

78. **ब्राह्मणग्राम न्याय** - जिस ग्राम में ब्राह्मणों की बस्ती अधिक होती है उसे ब्राह्मणों का गाँव करते हैं यद्यपि उसमें कुछ और लोग भी बसते हैं। औरों को छोड़ प्रधान वस्तु का ही नाम लिया जाता है, यही सूचित करने के लिये यह कहावत है।
79. **ब्राह्मणअमण न्याय** - ब्राह्मण यदि अपना धर्म छोड़ श्रमण (बौद्ध भिक्षुक) भी हो जाता है तब भी उसे ब्राह्मण श्रमण कहते हैं। एक वृत्ति को छोड़ जब कोई दूसरी वृत्ति ग्रहण करता है तब भी लोग उसकी पूर्ववृत्ति का निर्देश करते हैं।
80. **मज्जनोन्मज्जन न्याय** - तैरना न जाननेवाला जिस प्रकार जल में पड़कर डूबता उतरता है उसी प्रकार मूर्ख या दुष्ट वादी प्रमाण आदि ठीक न दे सकने के कारण क्षुब्ध और व्याकुल होता है।
81. **मंडूकतोलन न्याय** - एक धूर्त बनिया तराजू पर सौदे के साथ मेढक रखकर तौला करता था। एक दिन मेढक कूदकर भागा और वह पकड़ा गया। छिपाकर की हुई बुराई का भडा एक दिन फूटता है।
82. **रज्जुसर्प न्याय** - जबतक दृष्टि ठीक नहीं पड़ती तबतक मनुष्य रस्सी को साँप समझता है इसी प्रकार जबतक ब्रह्मज्ञान नहीं होता तबतक मनुष्य दुश्य जगत् को सत्य समझता है, पीछे ब्रह्मज्ञान होने पर उसका भ्रम दूर होता है और वह समझता है कि ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। (वेदांती)।
83. **राजपुत्रव्याध न्याय** - कोई राजपुत्र बचपन में एक ब्याध के घर पड़ गया और वहीं पलकर अपने को व्याधपुत्र ही समझने लगा। पीछे जब लोगों ने उसे उसका कुल बताया तब उसे अपना ठीक ठीक ज्ञान हुआ। इसी प्रकार जबतक ब्रह्मज्ञान नहीं होता तबतक मनुष्य अपने को न जाने क्या समझा करता है। ब्रह्मज्ञान हो जाने पर वह समझता है कि 'मैं ब्रह्म हूँ'। (वेदांती)।
84. **राजपुरप्रवेश न्याय** - राजा के द्वार पर जिस प्रकार बहुत से लोगों की भीड़ रहती है पर सब लोग बिना गड़बड़ या हल्ला किए चुपचाप कायदे से खड़े रहते हैं उसी प्रकार जहाँ सुव्यवस्थापूर्वक कार्य होता है वहाँ यह न्याय कहा जाता है।
85. **रात्रिदिवस न्याय** - रात दिन का फर्क। भारी फर्क।
86. **लूतातंतु न्याय** - जिस प्रकार मकड़ी अपने शरीर से ही सूत निकालकर जाला बनाती है और फिर आप ही उसका संहार करती है इसी प्रकार ब्रह्म अपने से ही सृष्टि करता है और अपने में उसे लय करता है।
87. **लोष्टलगुड न्याय** - ढेला तोड़ने के लिये जैसे डंडा होता है उसी प्रकार जहाँ एक का दमन करनेवाला दूसरा होता है वहाँ यह कहावत कही जाती है।
88. **लोह चुंबक न्याय** - लोहा गतिहीन और निष्क्रिय होने पर भी चुंबक के आकर्षण से उसके पास जाता है उसी प्रकार पुरुष निष्क्रिय होने पर भी प्रकृति के साहचर्य से क्रिया

में तत्पर होता है। (सांख्य)।

89. **वरगोष्ठी न्याय** - जिस प्रकार वरपक्ष और कन्यापक्ष के लोग मिलकर विवाह रूप एक ऐसे कार्य का साधन करते हैं जिससे दोनों का अभीष्ट सिद्ध होता है उसी प्रकार जहाँ कई लोग मिलकर सबके हित का कोई काम करते हैं वहाँ यह न्याय कहा जाता है।
90. **वह्निधूम न्याय** - धूमरूप कार्य देखकर जिस प्रकार कारण रूप अग्नि का ज्ञान होता है उसी प्रकार कार्य द्वारा कारण अनुमान के संबंध में यह उक्ति है (नैयायिक)।
91. **विल्वखल्लाट (खल्वाट) न्याय** - धूप से व्याकुल गंजा छाया के लिये बेल के पेड़ के नीचे गया। वहाँ उसके सिर पर एक बेल टूटकर गिरा। जहाँ इष्टसाध के प्रयत्न में अनिष्ट होता है वहाँ यह उक्ति कही जाती है।
92. **विषवृक्ष न्याय** - विष का पेड़ लगाकर भी कोई उसे अपने हाथ से नहीं काटता। अपनी पाली पोसी वस्तु का कोई अपने हाथ से नाश नहीं करता।
93. **वीचितरंग न्याय** - एक के उपरांत दूसरी, इस क्रम से बरा- बर आनेवाली तरंगों के समान। नैयायिक ककारादि वर्णों की उत्पत्ति वीचितरंग न्याय से मानते हैं।
94. **बीजांकुर न्याय** - बीज से अंकुर या अंकुर से बीज है यह ठीक नहीं कहा जा सकता। न बीज के बिना अंकुर हो सकता है न अंकुर के बिना। बीज और अंकुर का प्रवाह अनादि काल से चला आता है। दो संबद्ध वस्तुओं के नित्य प्रवाह के दृष्टांत में वेदांती इस न्याय को कहते हैं।
95. **वृक्षप्रकंपन न्याय** - एक आदमी पेड़ पर चढ़ा। नीचे से एक ने कहा कि यह डाल हिलाओ, दूसरे ने कहा यह डाल हिलाओ। पेड़ पर चढ़ा हुआ आदमी कुछ स्थिर न कर सका कि किस डाल को हिलाऊँ। इतने में एक आदमी ने पेड़ का धड़ ही पकड़कर हिला डाला जिससे सब डालें हिल गईं। जहाँ कोई एक बात सबके अनुकूल हो जाती है वहाँ इसका प्रयोग होता है।
96. **वृद्धकुमारिका न्याय या वृद्धकुमारी वाक्य न्याय** - कोई कुमारी तप करती-करती बुढ़ी हो गई। इंद्र ने उससे कोई एक वर माँगने के लिये कहा। उसने वर माँगा कि मेरे बहुत से पुत्र सोने के बरतनों में खूब धी दूध और अन्न खाँयँ। इस प्रकार उसने एक ही वाक्य में पति, पुत्र गोधन धान्य सब कुछ माँग लिया। जहाँ एक की प्राप्ति से सब कुछ प्राप्त हो वहाँ यह कहावत कही जाती है।
97. **शतपत्रभेद न्याय** - सौ पत्ते एक साथ रखकर छेदने से जान पड़ता है कि सब एक साथ एक काल में ही छिद गए पर वास्तव में एक एक पत्ता भिन्न भिन्न समय में छिदा। कालांतर की सूक्ष्मता के कारण इसका ज्ञान नहीं हुआ। इस प्रकार जहाँ बहुत से कार्य भिन्न भिन्न समयों में होते हुए भी एक ही समय में हुए जान पड़ते हैं वहाँ यह दृष्टांत वाक्य कहा जाता है। (सांख्य)।

98. **श्यामरक्त न्याय** - जिस प्रकार कच्चा काला घड़ा पकने पर अपना श्याम-गुण छोड़ कर रक्त-गुण धारण करता है उसी प्रकार पूर्व-गुण का नाश और अपर-गुण का धारण सूचित करने के लिये यह उक्ति कही जाती है।
99. **श्यालकशुनक न्याय** - किसी ने एक कुत्ता पाला था और उसका नाम अपने साले का नाम रखा था। जब वह कुत्ते का नाम लेकर गालियाँ देता तब उसकी स्त्री अपने भाई का अपमान समझकर बहुत चिढ़ती। जिस उद्देश्य से कोई बात नहीं की जाती वह यदि उससे हो जाती है तो यह कहावत कही जाती है।
100. **संदंशपतित न्याय** - सँड़सी जिस प्रकार अपने बीच आई हुई वस्तु के पकड़ती है उसी प्रकार जहाँ पूर्व ओर उत्तर पदार्थ द्वारा मध्यस्थित पदार्थ का ग्रहण होता है वहाँ इस न्याय का व्यवहार होता है।
101. **समुद्रवृष्टि न्याय** - समुद्र में पानी बरसने से जैसे कोई उपकार नहीं होता उसी प्रकार जहाँ जिस बात की कोई आवश्यकता या फल नहीं वहाँ यदि वह की जाती है तो यह उक्ती चरितार्थ की जाती है।
102. **सर्वपेक्षा न्याय** - बहुत से लोगों का जहाँ निमंत्रण होता है वहाँ यदि कोई सबके पहले पहुँचता है तो उसे सबकी प्रतीक्षा करनी होती है। इस प्रकार जहाँ किसी काम के लिये सबका आसरा देखना होता है वहाँ उक्ति कही जाती है।
103. **सिंहवलोकन न्याय** - सिंह शिकार मारकर जब आगे बढ़ता है तब पीछे फिर-फिरकर देखता जाता है। इसी प्रकार जहाँ अगली और पिछली सब बातों की एक साथ आलोचना होती है वहाँ इस उक्ति का व्यवहार होता है।
104. **सूचीकटाह न्याय** - सूई बनाकर कड़ाह बनाने के समान। किसी लोहार से एक आदमी ने आकर कड़ाह बनाने को कहा। थोड़ी देर में एक दूसरा आया, उसने सूई बनाने के लिये कहा। लोहार ने पहले सूई बनाई तब कड़ाह। सहज काम पहले करना तब कठिन काम में हाथ लगाना, इसी के दृष्टान्त में यह कहा जाता है।
105. **सुंदोपसुंद न्याय** - सुंद और उपसुंद दोनों भाई बड़े बली दैत्य थे। एक स्त्री पर दोनों मोहित हुए। स्त्री ने कहा दोनों में जो अधिक बलवान होगा उसी के साथ मैं विवाह करूँगी। परिणाम यह हुआ कि दोनों लड़ मरे। परस्पर के फूट से बलवान् से बलवान् मनुष्य नष्ट हो जाता है यही सूचित करने के लिये यह कहावत है।
106. **सोपानारोहण न्याय** - जिस प्रकार प्रासाद पर जाने के लिये एक एक सीढ़ी क्रम से चढ़ना होता है उसी प्रकार किसी बड़े काम के करने में क्रम-क्रम से चलना पड़ता है।
107. **सोपानावरोहण न्याय** - सीढ़ियाँ जिस क्रम से चढ़ते हैं उसी के उलटे क्रम से उतरते हैं। इसी प्रकार जहाँ किसी क्रम से चलकर फिर उसी के उलटे क्रम से चलना होता है (जैसे, एक बार एक से सौ तक गिनती गिनकर फिर सौ से निन्नानवे, अठानवे इस उलटे क्रम से गिनना) वहाँ यह न्याय कहा जाता है।

108. **स्थविरलगुड न्याय** - बुड्डे के हाथ फेंकी हुई लाठी जिस प्रकार ठीक निशाने पर नहीं पहुँचती उसी प्रकार किसी बात के लक्ष्य तक न पहुँचने पर यह उक्ति कही जाती है।
109. **स्थूणानिखनन न्याय** - जिस प्रकार घर के छप्पर में चाँड़ देने के लिये खंभा गाड़ने में उसे मिट्टी आदि डालकर दृढ़ करना होता है उसी प्रकार युक्ति उदाहरण द्वारा अपना पक्ष दृढ़ करना पड़ता है।
110. **स्थूलारुंधती न्याय** - विवाह हो जाने पर वर और कन्या को अरुंधती तारा दिखाया जाता है जो दूर होने के कारण बहुत सूक्ष्म है और जल्दी दिखाई नहीं देता। अरुंधती दिखाने में जिस प्रकार पहले सप्तर्षि को दिखाते हैं जो बहुत जल्दी दिखाई पड़ता है और फिर उँगली से बताते हैं कि उसी के पास वह अरुंधती है देखो, इसी प्रकार किसी सूक्ष्म-तत्व का परिज्ञान कराने के लिये पहले स्थूल-दृष्टांत आदि देकर क्रमशः उस तत्व तक ले जाते हैं।
111. **स्वामिभृत्य न्याय** - जिस प्रकार मालिक का काम करके नौकर भी स्वामी की प्रसन्नता से अपने को कृतकार्य समझता है उसी प्रकार जहाँ दूसरे का काम हो जाने से अपना भी काम या प्रसन्नता हो जाय वहाँ के लिये यह उक्ति है।
112. **अन्धचटकन्याय** - अन्धे के हाथ बटेर लगना
113. **अन्धगजन्याय** - अन्धा और हाथी
114. **अन्धगालालन्याय** - अन्धा और गाय की पूँछ
115. **अन्धपंगुन्याय** - अन्धा और लंगडा
116. **अन्धदर्पणन्याय** - अन्धा और दर्पण
117. **अन्धपरम्परान्याय** - अन्ध परम्परा
118. **स्थूणानिखनन्याय** - खूँटे को हिलाकर पक्का करना
119. **अर्धकुक्कुटीन्याय** - आधी मुर्गी खाने के लिये, आधी अण्डे देने के लिये
120. **कण्ठचामीकरन्याय** - गले में जेवर का न्याय
121. **कदम्बकोरक (कदम्बगोलक) न्याय** - कदम्ब की कली का न्याय ; यह न्याय तब उपयुक्त होता है जब उदय के साथ ही विकास आरम्भ हो जाय। ज्ञातव्य है कि कदम्ब का कली/फूल से फल बनने की प्रक्रिया एकसाथ ही होती है।
122. **कफोणीगुडन्याय** - कोहनी पर लगे गुड का न्याय (चाट भी नहीं सकते)
123. **कम्बलनिर्णेजन्याय** - कंबल धोने का न्याय (काम कुछ, परिणाम कुछ और)

124. **कूपमण्डूकन्याय** - कुएं का मेढक (जिसकी सोच सीमित और संकुचित हो)
125. **कूपयन्त्रघटिकान्याय** - रहट की बाल्टी (घटिका) का न्याय
126. **खलेकपोतन्याय** - खलिहान पर कबूतर (एक साथ धावा बोलते हैं)
127. **गुडजिह्विकान्याय** - गुड और जीभ (मीठा लेप की हुई औषधि)
128. **चोरापराधेमाण्डव्यदण्डन्याय** - चोर करे अपराध और संन्यासी को फांसी
129. **तमोदीपन्याय** - अंधेरे को देखने के लिये दीया (दीप)
130. **तुष्यतुदुर्जनन्याय** - दुर्जनों का तुष्टीकरण
131. **क्षीरनीरन्याय x तिलतण्डुलन्याय (हंसक्षीरन्याय)** - दूध का दूध, पानी का पानी
132. **विषकृमिन्याय** - विष के कृमि (विष में ही जिंदा रहते हैं)
133. **प्रधानमल्लनिर्बहणन्याय** - मुख्य योद्धा (मल्ल) का हार जाना
134. **मण्डूकप्लुतिन्याय** - मेंढक की छलांग
135. **वटेयक्षन्याय** - बरगद का भूत (सुनी-सुनाई बात)
136. **समुद्रतरंग्याय** - समुद्र और तरंग (एक ही चीज के रूप)
137. **स्थालीपुलाकन्याय** - पके भात की परीक्षा के लिये एक दाने की परीक्षा ही काफी है।
138. **अरुन्धतीदर्शनन्याय** - ज्ञात से अज्ञात की ओर जाना



श्री श्रुतस्कन्ध यन्त्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं

